# कवि शमशेर का काव्यदर्शन और कला-संधान
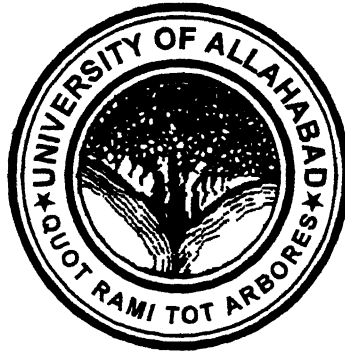
इलाहाबाद विश्वविद्यालय की
डी. फिल. उपाधि हेतु प्रस्तुत

## शोध-प्रबन्ध
**(THESIS)**

शोध निर्देशक :
**प्रो. सत्य प्रकाश मिश्रा**
हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

शोध छात्र
**अनिल कुमार सिंह**
हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

**2002**

# भूमिका

अपनी गहरी सवेदना और कलात्मकता के कारण शमशेर की कविताएं प्रारभ से ही मुझे आकर्षित करती रही है। भले ही उनका कुछ अर्थ समझ मे न आता रहा हो, फिर भी वे हमारे सवेदनातत्र को उद्वेलित करने मे सफल होती रही है। यह तो बाद मे समझ मे आया कि शमशेर की कविताए हमसे कुछ माग भी करती है। जिस तरह सगीत को आत्मसात् करने के लिए हमे अपनी श्रवणेन्द्रियो को प्रशिक्षित करना पड़ता है उसी तरह शमशेर की कविताए भी हमसे अपने अनुकूल प्रशिक्षण की माग करती है। एक बार शमशेर के सवेदना ससार तथा कलात्मक विन्यास को जान लेने पर उनकी कविताओ को समझने मे कठिनाई नही होती। वैसे भी उनकी कविताए 'समझने' और 'समझाने' का उपक्रम कम ही करती है। इससे उनकी 'गम्भीर, प्रयत्नसाध्य पवित्रता' मे खलल पडता है। वे तो सिर्फ अनुभूत करने के लिए है। इसलिए कभी-कभी तो वे अर्थहीन सी भी है। अपनी अर्थहीनता की आभा मे दमकती हुई और पाठक को अपने रग मे सरोबार करती हुई।

इसलिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मे शमशेर जी की कविताओ को पूर्ण रूप से 'समझ लेने' या 'समझा देने' का दावा नही किया गया है। वे किसी भी सॉचे मे फिट बैठने वाले कवि नही है। इसलिए इस शोध प्रबन्ध मे उनके काव्य दर्शन और कलात्मक सधान को समझने की विनम्र कोशिश भी उसी प्रशिक्षण का एक हिस्सा भर है जिसकी माग शमशेर की कविताए हमसे करती है। शायद इसका कुछ प्रतिफल आगे चलकर मिले।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मे प्रमुख रूप से शमशेर के कवि पक्ष पर ही विचार किया गया है। ख़ास तौर से कविता और कला सम्बन्धी उनके विचारो तथा कलात्मक सधान की विभिन्न प्रक्रियाओ पर। शमशेर प्रयोगशील कवि है। उनके द्वारा की गयी कला माध्यमो की जाँच

का भी एक पहलू है। बहुत ही सुन्दर गद्य उन्होने लिखा है। गद्य पर शायद फिर कभी काम हो सके।

इस शोध प्रबन्ध के लेखन के दौरान मुझे अनेक विद्वानो, साहित्कारो की आत्मीयता और सहयोग मिला है। इसके लिए मै उनका हार्दिक रूप से आभारी हूँ स्व श्री रमा प्रसाद घिल्डियाल 'पहाड़ी', डा राजेन्द्र कुमार, श्री त्रिलोचन शास्त्री, श्रीमती प्रेमलता वर्मा, श्री शिवकुटीलाल वर्मा, श्री अमरकान्त, श्री शेखर जोशी, श्री मार्कण्डेय, श्री दूधनाथ सिह, श्री अजय सिह।

मै अपने मित्रो का भी आभारी हूँ जिनके सहयोग और प्रोत्साहन के बिना मै कुछ कर पाता इसमे सदेह है।
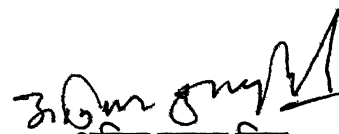
अपने गुरूदेव डा सत्य प्रकाश जी के बारे मे क्या कहूँ। उनके धैर्य की जितनी परीक्षा मैंने ली है इसे केवल मै ही जानता हूँ। फिर भी उनकी अपेक्षाओ पर कहॉ खरा उतर पाया मैं? शायद मैं उनके शिष्यत्व का ही अधिकारी नहीं था। इसके बावजूद उनके स्नेह और प्रोत्साहन की छत्रछाया निरतर मेरे ऊपर बनी रही है। आभार व्यक्त करने की हिमाकत मैं नही करूँगा –

जान दी दी हुई उसी की थी।
हक तो है कि हक अदा न हुआ।

अनिल कुमार सिह
शोध छात्र, हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

इलाहाबाद

25.02 2002

# अनुक्रम

**अध्याय : 4**

# अध्याय-1

# शमशेर का जीवन और परिवेश

(क) भौतिक परिवेश आर्थिक, राजनैतिक वातावरण आदि

(ख) साहित्यक, सास्कृतिक परिवेश

# शमशेर का जीवन और परिवेश

कवि शमशेर का जन्म 3 जनवरी 1911 को देहरादून मे हुआ था। हलाकि उनकी जन्मतिथि को लेकर थोडा भ्रम की स्थिति है। उनकी कई किताबो मे 13 जनवरी 1911 को उनकी जन्मतिथि दर्शाया गया है। किन्तु उनके पहले तथा दूसरे सग्रह तथा सर्वेश्वर और मलयज द्वारा उन पर सपादित किताब मे यह तिथि 3 जनवरी है। डा नरेन्द्र वशिष्ठ ने अपने शोध प्रबन्ध मे उनकी जन्मतिथि 3 जनवरी माना है। सद्य प्रकाशित शमशेर के छोटे भाई तेज बहादुर द्वारा लिखित उनकी जीवनी मे यह तिथि 3 जनवरी है। डा तेजबहादुर चौधरी ने इस बारे मे कहा है "मैने जो जन्मतिथि दी है वह उनके शिक्षा सस्थाओ के प्रमाण पत्रो से दी है जो कि 3 जनवरी 1911 है न कि 13 जनवरी 1911।"[1] शमशेर के पहले सग्रह के प्रकाशक जगत शखधर से तथा मलयज से उनकी निकटता तथा उनके छोटे भाई डा तेज बहादुर चौधरी के साक्ष्य पर यही प्रतीत होता है कि उनकी जन्मतिथि 3 जनवरी 1911 ही है न कि 13 जनवरी 1911। उनके पिता का नाम चौधरी तारीफ सिह था । वे लोग जाट पंवार गोत्र के थे तथा ग्राम एलम, जिला मुजफ्फर नगर तहसील केराना के रहने वाले थे। चौधरी तारीफ सिह कलेक्टरी मे अहलमद के पद पर थे। वे सामाजिक व्यक्ति थे। उनके यहा लोगों का आना जाना होता रहता था। उस जमाने की पत्र-पत्रिकाए माधुरी, दरोगा दफ्तर भी वे मंगाते थे। "जग" नाम का अखबार भी कभी-कभी लाते थे। चद्रकाता सतति, भूतनाथ आदि देवकीनन्दन खत्री की कृतियां उन्होने कई बार पढ़ रखी थी। उनकी एक और आदत थी कि अपने बच्चो को मजेदार कहानिया या प्रसग सुनाया करते थे। सम्भवतः बचपन के यही वे प्रभाव रहे होगे जो आगे चलकर कवि शमशेर के साहित्यिक

जीवन व्यतीत करने के निर्णय मे सहायक हुए होगे। चौधरी तारीफ सिह की शेरो-शायरी मे कोई रूचि नही थी। डा तेजबहादुर की किताब से पता चलता है कि एक बार शेरो-शायरी के लिए उन्होने शमशेर को डाटा भी था जिससे दु खी होकर उन्होने अपनी शायरी की कापी जला दी थी। हालाकि चौधरी तारीफ सिह को इस पर पश्चाताप हुआ और उन्होने फिर कभी शमशेर को इस बावत कुछ नही कहा। चौधरी तारीफ सिह गगा पुस्तक माला की पुस्तके भी घर मगाते थे। बकौल शमशेर निराला जी का ''परिमल'' सबसे पहले उन्होने इसी पुस्तक माला मे पढ़ा था। मतिराम से उनका परिचय भी इसी पुस्तक माला के जरिये हुआ था। कलकत्ता से प्रकाशित रामानद चटर्जी सम्पादित ''मार्डन रिव्यू'' भी उनके घर आता था।

शमशेर की माता का नाम प्रभुदेई (घर मे परमेश्वरी) था। वे देहरादून के प्रतिष्ठित यूनानी तथा मिसरानी हकीम मुशी भूप सिह की पुत्री थी। वे एक धर्मपरायण तथा सुसस्कृत महिला थी। उन्हे पजाबी गुरूमुखी तथा हिन्दी आती थी। शमशेर जी को हिन्दी का प्रथम अक्षर ज्ञान उन्होने ही कराया था। वे नित्य भागवत का पाठ करती थी। चौधरी तारीफ सिह भी रामायण का नियमित पाठ करते थे। शमशेर जी ने स्वीकार किया है कि उनकी कविताओ मे जो लीला, अवतार आदि वैष्णव शब्दावली आती है वह इसी प्रभाव के चलते है। शमशेर का अपनी मॉ से बहुत लगाव था। वे सारा दिन छाया की तरह उनके पीछे लगे रहते थे। 1919 मे शमशेर की मॉ का आकस्मिक देहात हो गया। उस समय शमशेर की उम्र आठ वर्ष थी। इस घटना का उनके ऊपर जर्बदस्त प्रभाव पड़ा। वे गुम-सुम रहने लगे। वे सहसा ही मॉ की स्नेह छाया से वंचित हो गये थे। डा. तेज बहादुर चौधरी ने उनकी जीवनी मे लिखा है ''यहा से शुरू हुई

यह मनोदशा, जीवन मे बारम्बार लाचारी, बेबसी और मन भरा रहने जैसे रहने पर, सभी तरफ से एक प्रकार से उपेक्षित-सा उन्होने अपने को समझा। और इसी मनोदशा ने उन्हे उत्तरोत्तर भावुक, अपने आप मे ही सिमटे रहने, अपने दु ख-सुख को स्वय ही सहने के योग्य बनाने मे योगदान दिया।[2] कुछ इसी मन स्थिति मे उन्होने लिखा होगा -

छेड मत दिन को कि पर्दे चाक है
आह निकलेगी फकत इस साज से[3]

डा तेजबहादुर चौधरी ने लिखा है कि "मॉ के मरने के बाद एक कवि के हृदय को जितना मर्मस्पर्शी, भावुक, सरल, नेक-छलहीन, सत्यव्रती, सन्तोषी, मनजीती, परहितैषी, निर्धनता का कटु अनुभवी, विपुल वैभव सम्पदा का परित्यागी, सभी के सम्पर्क मे रहते हुए भी अपने को पृथक रखने, समझने इत्यादि के जो भाव एक वास्तविक कवि मे होने चाहिए, वे इनमे मॉ के वियोग ने ही सस्कार के रूप मे दिये। मॉ को वे आखिर तक नही भुला पाए।"[4] मॉ से इतने गहरे लगाव का ही परिणाम था कि चौधरी तारीफ सिह के दूसरी शादी कर लेने पर शमशेर उन्हे अत तक माफ नहीं कर पाए।

शमशेर के सबसे छोटे मामा लक्ष्मीचन्द थे। वे "फारेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट" में लैब असिस्टेण्ट के पद पर थे। बाद मे उन्होने जबलपुर गनकैरेज फैक्टरी मे भी काम किया। लक्ष्मीचन्द जी को उर्दू शायरी से लगाव था। वे शेर भी कह लेते थे। 'तुम्हारा तूर पर जाना मगर नाबीना होना है', शमशेर की गजल का यह मिसरा उन्हीं का कहा हुआ है।लक्ष्मीचन्द जी को अंग्रेजी भी आती थी। जैसा कि नरेन्द्र वशिष्ठ ने अपनी शमशेर पर लिखी किताब मे लिखा है

कि "बाबू लक्ष्मीचन्द जी ने "हेमलेट" नाटक के माध्यम से कम उम्र मे ही शमशेर को अग्रेजी कविता से परिचित करा दिया।"[5] शायद यही कारण रहा होगा कि शमशेर शुरूआती दौर मे अग्रेजी मे कविता लिखते थे। बाबू लक्ष्मीचन्द जी शमशेर के इलाहाबाद प्रवास के दौरान भी उनकी मदत करते रहते थे। उनकी एक पुत्री "मुन्नी" थी जिन पर शमशेर का अगाध वात्सल्य था। उनका नाम उन्होने "उदिता" रखा था जो बाद मे उनके सग्रह का नाम हुआ। शमशेर के कवि मन की बनावट पर बाबू लक्ष्मीचन्द जी का अवश्य प्रभाव रहा है।

शमशेर के चचेरे भाई विशम्भर सिह पवार ने अपने एक लेख मे बताया है कि गोण्डा मे चौधरी तारीफ सिह के यहा "खाना बनाने के लिए एक महराजिन व बरतन आदि साफ करने के लिए एक कहारिन भी थी जिन्हे हम सभी "डिल्लियाइन" के नाम से पुकारते थे। वह कुछ काले रग की, नाटे कद की व आधी उम्र की मेहनती कहारिन थी। यह कभी-कभी देहाती व शहरी कहानियॉ व देवी-देवताओ की व भूत-प्रेत की कहानियॉ बडे रोचक ढग से सुनाया करती थी। . उनके भीतर के रचनाकार को डिल्लियाइन ने अवश्य प्रेरित किया होगा।[6] शमशेर की मॉ की मृत्यु के बाद उसने बच्चो को अपनी छाया मे ले लिया था। उस समय शमशेर की उम्र मात्र 8 साल तथा तेज सिह की 7 साल उम्र थी। अपने इलाहाबाद प्रवास के दौरान शमशेर गोण्डा गये थे। "दिल्लियाइन" से उनकी विह्वल मुलाकात भी हुई थी।

"देहरादून" से मेरा रिश्ता गहरा रहा है। मेरा जन्म वही हुआ। बचपन का एक बड़ा हिस्सा वहा गुजरा .. .. शात जगह थी। खूब हरीतिमा थी। देहरादून की अपनी एक स्वाभाविक लय थी।"7

शमशेर की प्रारम्भिक शिक्षा देहरादून मे हुई थी। आठवी जमात तक वे देहरादून मे पढ़े थे। उस जमाने मे उर्दू सरकारी जुबान थी। उर्दू को खास तवज्जोह दी जाती थी। पारिवारिक वातावरण भी उर्दू परस्त था। उर्दू के बडे शायरो की पक्तियॉ अक्सर कान मे पड जाती थी। शमशेर ने शायद इसी प्रभाव के चलते छठी-सातवी जमात से ही गजल लिखना शुरू कर दिया था। उन्होने स्वीकार भी किया है कि "हिन्दी का मै पण्डित नही हूँ, मेरा कभी विषय भी नही रहा । हिन्दी से साबका मेरे शौक की वजह से था।"[8] देहरादून की प्राकृतिक सुषमा और उर्दू शायरी की पृष्ठभूमि शायद शमशेर की रूमानियत की ये भी वजहे है। हिन्दी कविता से उनकी छेडछाड़, 8वी, 9वी जमात से शुरू होती है। देहरादून मे शमशेर की प्रारम्भिक शिक्षा ईसाई मिशनरी मे हुई थी। उनकी कविताओ मे करूणा का जो विराट ससार है उसके सूत्र जरूर यही से जुडे होगे। बाद मे उनके पिता ने ईसाइयत के प्रभाव से बचाने के लिए उनका एडमिशन डी ए वी कॉलेज मे करा दिया था। वहा वे और उनके छोटे भाई तेज सिह बोर्डिग हाउस मे रहते थे। शमशेर जी शुरू से ही शात प्रकृति के थे। उन्हे खेलने-कूदने से ज्यादा पढ़ने मे रूचि थी। उन दिनो उनको जो जेब खर्च मिलता था उसमे से पैसे बचाकर वे देहरादून की पुरानी किताबो की दुकान से किताबे खरीदा करते थे। गालिब, जफर, दाग, भारतेन्दु, इकबाल, शेक्सपियर आदि महान रचनाकारो की कृतियो से उनका परिचय इन्ही दुकानो मे हुआ था। माधुरी और सुधा की पुरानी प्रतियां यही से वे लाते थे। उनकी अध्ययनशीलता तथा एकातप्रियता के चलते ही डी0ए0वी0 कॉलेज में इतिहास के अध्यापक और कवि हरिनारायण मिश्र का ध्यान उनकी ओर गया। शमशेर कविता भी करते हैं यह जानकर वे बहुत उत्साहित हुए और बाद के दिनो मे उन्होंने शमशेर के अध्ययन और रचनाशीलता को प्रेरणा दी और हर प्रकार से उनकी मदत

की। मिश्र जी ने शमशेर का परिचय वहा के एक बगाली अध्यापक श्री चटर्जी से करवाया जिनसे शमशेर को अग्रेजी कविता का विस्तृत ज्ञान मिला। इन दोनो गुरूओ ने उन प्रारम्भिक दिनो मे शमशेर को एक साहित्यिक वातावरण प्रदान कर उनके अन्दर के रचनाकार को निखरने का मौका दिया। शमशेर इनके योगदान को भूले नही थे और अक्सर उनको कृतज्ञतापूर्वक याद करते थे। बाद मे जब गोडे से हाईस्कूल पास कर शमशेर पुन इण्टर मे पढ़ने देहरादून लौटे तब भी इन गुरूओ का स्नेह और प्रोत्साहन उन्हे मिलता रहा।

सन् 1928 मे गोण्डा से शमशेर जी ने अपनी हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। अग्रेजी, हिन्दी और उर्दू कविता से उनका परिचय हो चुका था। गगा पुस्तक माला के माध्यम से सबसे पहले निराला का परिमल पढ़ा था। निराला जी तभी से उनके प्रिय कवि बन गये। उन्ही दिनो उन्होने हिन्दी मे "उन्नति", उर्दू मे "माअराज', तथा अग्रेजी मे (Success) नाम से एक हस्तलिखित पत्रिका भी निकाली थी। इसके तीन-चार अक निकाले थे। डा0 चौधरी को इसकी एक प्रति 1926 मे मिल गयी थी। इसे उन्होने जतन से सभाल कर रखा था। अब यह डा0 रजना अरगडे के पास सुरक्षित है।

सन् 1928 मे ही चौधरी तारीफ सिह ने अपना तबादला देहरादून करवा लिया। इस तरह शमशेर और उनके भाई तेजबहादुर का पुन- डी0ए0वी0 कॉलेज मे प्रवेश हुआ। तब तक शमशेर का साहित्यिक अनुराग काफी बढ़ चुका था। वहाँ की लायब्रेरी मे शमशेर जी ने अपना अध्ययन जारी रखा। इसी बीच चौधरी तारीफ सिह का परिचय देहरादून के प्रतिष्ठित केमिस्ट "डा0 चन्दन सिंह एण्ड सस" के मालिक चौधरी शमशेर सिंह से हुआ। वे नि:सन्तान थे अत उन्होने

अपनी भानजी धर्मवती को अपने पास रखकर उसका पालन-पोषण किया था। इन्ही धर्मवती जी से शमशेर जी का विवाह 1929 मे सम्पन्न हुआ। धर्मवती जी काफी सुसस्कृत महिला थी। वे पढ़ी-लिखी थी। मॉ की मृत्यु के बाद उनसे ही कवि को मानसिक सबल मिला। शमशेर की साहित्यिक गतिविधिया अब तक बढ़ चुकी थी। कॉलेज मे होने वाले मुशायरो, कवि-सम्मेलनो मे वे अपनी रचनाए पढ़ते थे। कविता के अलावा अन्य विषयो पर ध्यान न देने का नतीजा यह हुआ कि वे इण्टर मे फेल हो गये। उन दिनो की याद करते हुए उन्होने बताया है"
उन दिनो गद्य के बजाय पद्य मे सभी विषयो के प्रश्नो के उत्तर देना मुझे ज्यादा आसान दिखता था।"9 अगले साल 1931 मे उन्होने गोण्डा से इण्टर पास किया। आगे की पढ़ाई के लिए वे इलाहाबाद आ गये।

इलाहाबाद मे उनके उस समय के सहपाठियो मे नरेन्द्र शर्मा, केदारनाथ अग्रवाल, वीरेश्वर सिह प्रमुख थे। उस जमाने मे इलाहाबाद की हैसियत कुछ साहित्यिक तीर्थ जैसी थी। छायावाद के तीन प्रमुख स्तम्भ निराला, पन्त और महादेवी वर्मा की सक्रिय उपस्थिति मे शहर का साहित्यिक वातावरण जीवंत था। इन कवियो का सानिध्य भी शमशेर को मिला। निराला और पंत का अपने पर प्रभाव वे खुद स्वीकार करते थे। पत की कविता की चित्रात्मकता और प्रकृति तथा निराला की प्रयोगधर्मिता का उन पर सबसे ज्यादा प्रभाव पड़ा। इलाहाबाद मे शमशेर जी हिन्दू बोर्डिग हाउस कमरा नं0 127 मे रहते थे। हर पूर्णिमा को वहां काव्य गोष्ठी जमती थी। पत जी के सभापतित्व में एक बार छात्रावास मे काव्य प्रतियोगिता का आयोजन भी हुआ था। शमशेर की कविता "कवि-कला का फूल हूँ मैं" को प्रथम पुरस्कार मिला था। इन्ही दिनो शमशेर

ने अपने अध्ययन क्षेत्र का विस्तार किया। छायावादी कवियो के साथ अग्रेजी के टेनीसन, शैली, रोजेटी तथा उर्दू के इकबाल, हाली, फानी तथा टैगोर का उन्होने अध्ययन किया। शमशेर की प्रारम्भिक कविताओ पर छायावादी शैली का स्पष्ट प्रभाव दीखता है। सन् 1933 मे शमशेर जी ने बी0ए0 पास किया। 1934 मे उन्होने बी0ए0 (आनर्स), अग्रेजी मे दाखिला लिया। इलियट, कमिग्स तथा एजरा पाउड की कविताए पढ़ने को मिली पर आवश्यक हाजिरी के अभाव मे उन्हे परीक्षा छोडनी पडी। बी0ए0 करते हुए उन्होने अपनी अग्रेजी मे लिखी कविताओ का एक सकलन भी तैयार किया था। पर इसका प्रकाशन सम्भव न हो सका।

इन्ही दिनो उनकी पत्नी धर्मवती जी क्षयरोग से ग्रस्त हो गयी। शमशेर जी के श्वसुर चौधरी शमशेर सिह का मानना था कि उनको किसी पहाड़ी सेनेटोरियम मे भर्ती करा दिया जाय। अत शमशेर जी उनको लेकर इलाज के लिए शिमला चले गये। गढ़खल के एक सेनेटोरियम मे धर्मवती जी को भर्ती करा के शमशेर जी उनकी सेवा मे लग गये। किन्तु धर्मवती जी का क्षयरोग काफी बढ़ चुका था। उन दिनो टी0वी0 के इलाज की कोई अच्छी दवा न थी। अन्तत 1935 मे धर्मवती का देहान्त हो गया। इस घटना का शमशेर जी पर गहरा प्रभाव पडा। धर्मवती जी की मृत्यु के बाद शमशेर का मन पढ़ाई से उचट गया। इसी बीच उनके पिताजी उन पर दूसरी शादी करने के लिए दबाव डालने लगे। पत्नी की मृत्यु का आघात अभी ताजा था। शमशेर ने कडाई से विरोध किया। इस पर चौधरी तारीफ सिह ने उन्हे बुरा-भला कहा। इन बातो से शमशेर जी नाराज होकर दिल्ली चले गये और खानाबदोशी का जीवन व्यतीत करने लगे। 1935 मे ही उन्होंने दिल्ली में चित्रकला सीखने के लिए शारदा उकील कॉलेज ज्वाइन कर लिया।

बगाल स्कूल की नीव शारदा चन्द्र उकील ने ही डाली थी। कॉलेज मे वही मुख्य चित्रकार थे। विधिवत चित्रकार बनने की इच्छा शमशेर जी मे शुरू से ही थी। उकील बन्धुओ से पेटिंग सीखने लगे। साइनबोर्ड पेंटिंग से वे फीस और खाने के पैसे जुटाते थे। जीविका का कोई साधन न होने से उनका यह दिल्ली प्रवास काफी कष्टदायक सिद्ध हुआ। उन्ही दिनो अपने भाई तेज सिह के नाम एक पत्र मे उन्होने लिखा"[9] मैने घर छोड़ दिया और अपनी किस्मत लेके दिल्ली आ गया हू। अब मेरे लिए जोजा (धर्मपत्नी) मॉ, बहन, भाई, बाप, यार-दोस्त जो भी है वह बस अदब ही है, उसी के लिए अब जीना-मरना है, साहित्य की राह से अब डिगना नही है । मेरे पास अब केवल चार दिनो के लायक, चावल, दाल, आटा, कोयले रह गये है। पैसे लगभग समाप्त हो चुके है, अगर जल्द प्रबन्ध नही हो सका तो भूखे रहने की नौबत आ सकती है, तुम्हारी भाभी के कुछ जेवर तुम्हारे पास है। उसमे से दो-एक बेचकर मुझे कुछ रकम जल्दी भेज देना, मै प्रतीक्षा करूगा।"[10] जाहिर है कि जेवर बेचकर दिल्ली मे अधिक समय तक गुजर नही हो सकती थी। इसी बीच देहरादून मे उकील बन्धुओ के कला विद्यालय की शाखा खुलने पर शमशेर 1936 मे देहरादून लौट आए तथा अपनी कला साधना जारी रखा। देहरादून मे वे पेटिंग सीखने के साथ अपने श्वसुर की केमिस्ट की दुकान पर कम्पाउण्डरी भी करते रहे।

1936 के अन्त मे हरिवशराय बच्चन देहरादून गये। इलाहाबाद मे अध्ययन के दौरान शमशेर उनके सम्पर्क मे भी आये थे। बच्चन जी ने देखा कि एक अत्यन्त प्रतिभाशाली कवि घुट-घुट कर खत्म हो रहा है। बच्चन ने लिखा है "हुश्न-ओ-इश्क, शेर-ओ-शायरी का शैदा शमशेर पुलटिस बना रहा है। उसी वक्त मेरे दिमाग मे यह बात उठी थी- इस हालत से तो इसको

निकालना चाहिए-इस हालत से तो इसको निकलना होगा।"[11] उस समय बच्चन की भी पहली पत्नी की मृत्यु हो चुकी थी। दोनो मे आपसी सहानुभूति स्वाभाविक थी। बच्चन ने अपने देहरादून प्रवास मे शमशेर को इस बात के लिए राजी किया कि वे इलाहाबाद जाकर एम०ए० करे। बच्चन जी की प्रेरणा से शमशेर 1937 मे इलाहाबाद पहुँचे। वहा उनकी फीस का बच्चन और खाने का प्रबन्ध पन्त जी करते थे। 1938 मे उन्होने एम०ए० (अग्रेजी) प्रीवियस पास किया। किन्तु 1939 मे वे आर्थिक दबावो के चलते एम०ए० फाइनल की परीक्षा मे न बैठ सके। एम०ए० पूरा न करने का दूसरा कारण उन्होने बताया कि "मैने तय कर लिया था कि सरकारी नौकरी नही करूगा। उन दिनो राष्ट्रीय आन्दोलन चल रहा था। देश पराधीन था। मैने फैसला किया कि अग्रेजो की नौकरी नही करूगा। इसलिए ऐसी औपचारिक शिक्षा का महत्व मेरी नजरो मे नही था।[12] 1939 मे ही चौधरी तारीफ सिह की मृत्यु हो गयी। धर्मवती जी की मृत्यु के पश्चात् चौथे वर्ष ही शमशेर जी के लिए यह एक और आघात था। 28 वर्ष की उम्र मे यह तीसरी मृत्यु थी। शमशेर जी बिल्कुल अकेले हो गये।

1939 मे ही शमशेर जी ने "रूपाभ" मे कार्यालय सहायक के रूप मे काम किया। "रूपाभ" का प्रकाशन बद होने पर वे 1940 मे बनारस चले गये और वहा से प्रकाशित "कहानी" पत्रिका मे त्रिलोचन जी के साथ काम करने लगे। वहा वे त्रिलोचन जी के सहयोगी थे। त्रिलोचन जी उन दिनो की याद करते हुए कहते हैं "शमशेर और शिवदान सिंह चौहान दोनो एक साथ आये थे। मैं वही पहले से था, "कहानी" मे।"[13] शिवदान सिह चौहान उस समय सरस्वती प्रेस बनारस से प्रकाशित "हस" पत्रिका का संपादन कर रहे थे। त्रिलोचन जी से शमशेर की

घनिष्ठता बहुत बढ़ गयी थी। त्रिलोचन सस्कृत के ज्ञाता थे किन्तु उनमे सस्कृत के पडितो की शास्त्रीय रूढ़ता नही थी। इसे शमशेर जी पसद करते थे और अक्सर मगन होकर त्रिलोचन से कहते थे कि "तुम रूढ़िमुक्त हो।"[14] डा0 रामविलास शर्मा भी बनारस आते रहते थे। त्रिलोचन, शिवदान सिह चौहान, डॉ0 रामविलास शर्मा जैसे मित्रो के कारण शमशेर का झुकाव मार्क्सवाद की तरफ हुआ। बनारस मे कुछ महीनो के लिए उन्होने रामेश्वरी गर्ल्स कालेज मे पढ़ाया भी था।

1942 मे शमशेर जी अपने छोटे मामा लक्ष्मीचन्द जी के यहा जबलपुर गए। यहा रहते हुए शमशेर जी कम्युनिस्ट पार्टी से जुडे और पार्टी की गतिविधियो मे सक्रिय हिस्सेदारी की। जबलपुर मे ठाकुर दादा, भागचद जैन, और मुखर्जी उनके कामरेड मित्र हुआ करते थे। 1943 तक शमशेर जबलपुर मे रहे। यहा उन्होने अपनी अनेको महत्वपूर्ण कविताए लिखी। इसी वर्ष 25 मई को सरस्वती प्रेस बनारस से "दोआब" का प्रकाशन हुआ था।

1944 मे शमशेर कैसरग्रस्त अपने श्वसुर के इलाज के लिए उनको लेकर मुम्बई गये। वहा निवास के दौरान उनका परिचय इप्टा की गतिविधियो से हुआ। वे उसके प्रभाव मे आये। 1945 मे शमशेर जी दुबारा बम्बई जा पहुँचे। वहा वे पार्टी कम्यून मे रहते थे। यही उनका परिचय कैफी आजमी, सरदार जाफरी, पूर्णचन्द जोशी, नेमिचन्द्र जैन, रेखा जैन से हुआ। राजीव सक्सेना से उनका परिचय यूँ तो 1941 मे बनारस के दिनो से ही था किन्तु यहां मैत्री प्रगाढ़ हुई। बम्बई के दिनो की याद करते हुए राजीव सक्सेना ने लिखा है "यूँ बम्बई में जब हम दोनों कम्युनिस्ट पार्टी के केन्द्रीय कार्यालय मे काम करते थे (1945-47) तब कविता सम्बन्धी दृष्टिकोणो पर आपसी टकराव के कई मौके आए। वह अमरीकी कवि ई0ई0 कमिंग्स के बड़े

प्रशसक थे जो अभिव्यक्ति लाघव के कौशल से हमे प्रभावित करते। मै अमरीकी कवि वाल्ट ह्विटमैन का बडा प्रशसक था जिनके रिहटोरिक मे मुझे प्रगतिशील कविताधारा का भविष्य दिखाई देता था। इसके साथ ही हम लोग फ्रासीसी कवि लुई अरॉगा और पाल एलुअर, स्पेनी भाषा के पाब्लो नेरूदा तथा तुर्की के कवि नाजिम हिकमत की भी सराहना करते थे। ये कवि वामपथी थे किन्तु उनमे से कुछ विशेषकर अरागा और पाल एलुआर सुर्रियलिज्म के मजे हुए कलाकार थे।

वास्तव में, यही वह पृष्ठभूमि थी जहॉ शमशेर जी का काव्यसौन्दर्य बोध विकसित हुआ और डा0 रामविलास शर्मा के जर्बदस्त "अगिया बैताल" दबाव के बावजूद शमशेर जी या मुक्तिबोध के काव्य-बोध की धारा बदली नही जा सकी।"[15] बम्बई मे पार्टी कम्यून मे रहते हुए "नया साहित्य" का सपादन किया था। 1946 मे उनके सपादन मे नया साहित्य का निराला अक प्रकाशित हुआ था और खूब चर्चित हुआ था। बम्बई मे पार्टी कम्यून के दिनो की याद करते हुए शमशेर जी ने "दूसरा सप्तक" के अपने आत्म परिचय मे लिखा है "वहॉ कम्युनिस्ट पार्टी के सगठित जीवन मे, अपने मन मे अस्पष्ट से बने हुए सामाजिक आदर्शों का मैने बहुत सुन्दर सजीव रूप देखा। मेरी काव्य प्रतिभा ने उससे काफी लाभ उठाया।"[16] बम्बई मे रहकर उन्होने "बात बोलेगी", "माई", "घिर गया है समय का रथ", जैसी कविताएं लिखी। "माई" बम्बई मे कम्युनिस्ट पार्टी के मुख्य कार्यालय मे सबके खाने-पीने की व्यवस्था का काम करती थी। वह काफी अनुशासन रखती थी। शमशेर जी उसके बड़े प्रशंसक थे। 1946 मे शमशेर जी के पार्टी कम्यून में रहते हुए ही कम्युनिस्ट पार्टी के दफ्तर पर हमला हुआ था। इस हमले में शमशेर

जी भी घायल हुए थे। इस हमले के बारे मे अजय सिह से बात करते हुए शमशेर जी ने बताया था "द्वितीय विश्वयुद्ध का दौर था। उसमे कम्युनिस्ट पार्टी एक तरफ थी और फारवर्ड ब्लाक, सोशलिस्ट व काग्रेस दूसरी तरफ थी। शाम को चौपाटी पर जनता की भीड को सम्बोधित करते हुए जलसे होते थे। जलसे के बाद लौटते हुए फारवर्ड ब्लाक वाले, सोशलिस्ट व काग्रेसी रास्ते मे कम्युनिस्ट पार्टी के दफ्तर के पास हगामा करते थे। कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ता और हम लोग भी तैयार रहते थे। पार्टी के दफ्तर को जला देने, सदस्यो को जला देने की कोशिश होती थी। पर वे कामयाब न हो पाते थे। उसी मे यह हमला हुआ था। कई लोग घायल हुए थे। हमला काफी बडा था। दूसरी बडी लड़ाई को कम्युनिस्ट पार्टी ने "लोकयुद्ध" घोषित कर रखा था, इस वजह से पार्टी से नाराजगी थी।"[17]

1947 मे शमशेर जी पुन इलाहाबाद वापस लौट आये और एलनगज मे मकान लेकर रहने लगे। कुछ महीनो की बेकारी के बाद 1948 मे वे माया प्रेस मे सहायक सम्पादक के रूप मे नियुक्त हुए। किन्तु उनका नाम नही जाता था। उस समय "माया" के सम्पादक भैरव प्रसाद गुप्त थे। वे बहुत अनुशासन प्रिय थे। यहॉ शमशेर जी का हाल था कि कभी पहुँचे, कभी एकदम गायब। कभी एक ही कहानी पर दो दिन लगा दिया। अन्ततः जो होना था वही हुआ। 140 रू0 की नौकरी भी छोड़नी पड़ गयी। 1952 मे उनकी कविताए "दूसरा सप्तक" मे सकलित हुई थी। 1954 तक शमशेर जी ने माया प्रेस की नौकरी की थी। इस बीच वे "नया पथ" और "मनोहर कहानियां" मे सम्पादन सहयोग भी करते रहे। एलनगंज के मकान मे ही उन्होने अपनी प्रसिद्ध कविता "अमन का राग" की रचना की थी। 1953 में शमशेर जी बहादुरगंज मे "जस्टफिट

टेलर'' वाले मकान मे आए और 1964 तक वही उनका आवास रहा। यह घर उनके लिए जस्ट ही फिट था। बहादुरगज का यह मकान सस्थान था जहा शमशेर जी ने जीवन के अनेको रूप देखे। उन दिनो की याद करते हुए डा0 तेज बहादुर चौधरी ने लिखा है ''जब मै इलाहाबाद पहुँचा तो देखा, उस जस्टफिट मकान मे घोर अभाव और अस्तव्यस्तता थी, खाने-पीने के नाम पर कुछ नही था, पता चला कि सभी काम भगवान भरोसे चल रहा है। भगवान भरोसे क्या कभी कोई कविता छप गयी तो कुछ मिल गया या कभी हमारे मामा जी ने कुछ सहायता कर दी एक बार कपडो की इतनी कमी हो गयी कि मुझे भय्या ने लिखा कि दोनो कमीजे पीछे से फट चुकी है, तुम्हारी दी हुई अचकन ऊपर से पहन कर जाता हूँ।''[18] इतनी अस्तव्यस्तता के बावजूद उस घर मे सबका स्वागत होता था। अनेक राजनीतिक, साहित्यिक सवालो पर बाते होती थी। मुक्तिबोध, त्रिलोचन और अन्य साहित्यकारो का आगमन उस घर मे होता रहता था। डा0 तेजबहादुर ने उनकी जीवनी मे लिखा है कि ''उस जस्टफिट आश्रम ने भय्या के स्वभाव एव प्रकृति को इतना डिगा बना दिया था कि अब जमाने का कोई भी छोटा-बडा झटका इन्हें फिट नही सकता था, ''वर्क की शाखो पे अपना आशिया तामीर है'' अर्थात् बिजलियो की शाखो पर मेरा घर बना हुआ है, जो भी मुझे उड़ाने की हिम्मत करेगा वह स्वय ही मिट जायेगा।''[19] इस घर मे उनकी बहन मुन्नी भी कभी-कभी आया करती थी। शमशेर जी का उन पर खास स्नेह था। जस्टफिट वाले मकान मे रहते हुए शमशेर जी ने काफी चित्र भी बनाए थे। ये सभी रेखाचित्र और पेंटिंग जैसा भी कागज मिला उसी पर बनाए जाते थे। शमशेर जी जब जस्टफिट वाला मकान छोड़कर दिल्ली गये तो यह अमूल्य सामग्री वही छूट गयी। जस्टफिट वाले मकान मे रहते हुए उनका मलयज के परिवार से घनिष्ठ सम्पर्क हुआ था। मलयज की बड़ी बहन प्रेमा उनसे

काफी घुली-मिली हुई थी। बाद मे जब शमशेर जी 1965 मे दिल्ली विश्वविद्यालय मे यू0जी0सी0 के प्रोजेक्ट "उर्दू-हिन्दी कोश" के हिन्दी सम्पादक होकर दिल्ली गये तो मलयज का परिवार भी उनके साथ गया।

1959 मे शमशेर जी की कविताओ का पहला सकलन "कुछ कविताए" जगत शखधर ने प्रकाशित किया। 1961 मे उनका दूसरा कविता सकलन "कुछ और कविताएँ" राजकमल प्रकाशन से छपकर आया। 1962 की गर्मियो मे कुछ दिनो के लिए शमशेर जी ने सारनाथ प्रवास किया था। यही पर उनका परिचय अमरीकी कवि एलेन गिन्सवर्ग से हुआ था। इस मुलाकात का जिक्र उन्होने अपनी डायरी मे किया है। 1964 मे शमशेर मुक्तिबोध की बीमारी के सिलसिले मे "दिल्ली" आए। यही पर उन्होनें "चॉद का मुँह टेढ़ा है" की भूमिका लिखी थी। मुक्तिबोध उनके घनिष्ठ मित्रो मे थे। 1948 मे जबलपुर मे शमशेर उनसे कई बार मिले थे। 1957 के इलाहाबाद वाले लेखक सम्मेलन मे मुक्तिबोध आए थे। वे शमशेर जी के साथ जस्टफिट मे ही ठहरे थे। उन्होने अपनी लम्बी कविता "अधेरे मे" का पाठ भी किया था। 1961 मे शमशेर मुक्तिबोध से मिलने राजनॉदगॉव भी गये थे। जस्टफिट टेलर्स वाले मकान मे होने वाली गोष्ठियो की याद करते हुए हरिशकर परसाई जी ने लिखा है, "बहादुरगज के जस्टफिट टेलर्स" के ऊपर तीसरी मजिल उनके कमरे पर कुल 5-6 लोगो की गोष्ठी होती थी जिसमे शमशेर जी के सिवा मुक्तिबोध, नरेश मेहता, प्रमोद वर्मा, मैं तथा एक-दो स्थानीय साहित्यकार होते थे। गोष्ठिया बहुत मजेदार होती थी। यहॉ शमशेर खुलते थे। कविताए भी सुनाते थे। मुक्त हँसी शमशेर हँसते थे। शमशेर में बहुत नफासत है। वे बहुत सुसंस्कृत हैं। अतिशय कोमल और नम्र हैं।"[20]

1965 से 1977 तक शमशेर जी दिल्ली विश्वविद्यालय मे यू0जी0सी0 के प्रोजेक्ट "उर्दू-हिन्दी कोश" के सम्पादक रहे। दिल्ली मे अपने शुरूआती दिनो मे ये कुछ दिन डा0 प्रभाकर माचवे के यहॉ रहे थे। इसका जिक्र बाबा नागार्जुन ने अपने साक्षात्कार मे इस तरह किया है "तो इलाहाबाद से जब दिल्ली आये वो, तो प्रेमलता भी आई। मलयज भी दिल्ली आये। काम लगा तो शमशेर और प्रेमलता दो-चार दिन माचवे जी के यहा रहे।"[21] मलयज और उनका परिवार शमशेर जी के साथ दिल्ली गया था। बकौल नागार्जुन "अब चास ऐसा हुआ कि माचवे जी ने पेरू के कल्चरल अटैची- डा0 तोला का सम्पर्क करा दिया इनसे कि हिन्दी सीखनी है तो इनसे सीखिए। प्रेमलता वर्मा से। तो वो रहता था मॉडल टाउन में ही। बडा मकान लिया था । तो उसी मे दो रूम दे दिये। मलयज, प्रेमलता और सब उसी मे शिफ्ट कर गये पूरा परिवार।"[22] इलाहाबाद मे ही शमशेर जी का झुकाव प्रेमलता वर्मा की तरफ हुआ था। अपने जीवन के पचासवे वर्ष मे शमशेर जी एक गहरे प्रेम मे मुब्तिला थे। उन दिनो की याद करते हुए श्री दूधनाथ सिह ने लिखा है "शमशेर ने उस लड़की की महत्वाकांक्षाओ को हवा देना शुरू किया। लेकिन गणित के आधार पर नाप-तोल कर नही। कही वे इतने सरल-सीधे और गहन रूप से भावुक आदमी थे कि वे ऐसा ही समझने लगे कि इस लड़की मे गजब की प्रतिभा है। वह कविता की ऊचाइयो तक आसानी से पहुँच सकती है। . .तो शमशेर एक जोगी की तरह रम गये थे। पूर्णरूप से प्रेम मे एक "होल-टाइमर"।[23] उन दिनो मलयज के घर अनेक साहित्यिको का आना होता रहता था। अज्ञेय भी आते थे। जैसा कि श्री दूधनाथ सिह ने लिखा है "जैसे-जैसे शमशेर हवा देने लगे, लड़की की महत्वाकांक्षाए पेंग बढ़ाने लगी।..... एक बार भटक

खुल जाने के बाद उसका उच्छृखल आत्मबल कई गुना बढ़ गया। उस घर मे कवि लेखक तरह-तरह के बैक्टीरिया की तरह फैले हुए थे। अज्ञेय भी अक्सर आते थे। उनका आना एक उन्मादक उत्सव की तरह होता था। सो, वह लडकी फटाफट आगे बढी और उसने बडी जल्दी ही उस सुवेष, सुघड, चमकते, गौरवशाली कवि से प्रेम कर डाला। हम लोग अजीब पशोपेश मे पड गये। यह क्या हो रहा है। वात्स्यायन इतने "छोटे" है। उन्हे अपने कविमित्र का भी ख्याल नही। मुझे शमशेर पर गुस्सा आता। क्या वे इतने असहाय है कि खत्म नही कर सकते। क्या वे डरते है कि फिर कभी प्रेम नही मिलेगा। लेकिन यह तो खुल्लम-खुल्ला अपमान है। ऐसे स्निग्ध और कोमल कवि को "हर्ट" करना है। क्या वे बिल्कुल "हर्ट" नही "फील" कर रहे है। शमशेर से क्या मिल सकता था। सिर्फ शब्द, सिर्फ ऊॅचाइयॉ, सिर्फ अनन्त आकुल प्रेम, जो व्यक्त को भी अव्यक्त बना देता था। लेकिन अज्ञेय से प्रेम करना तो सामान्य घर से आयी हुई उस लडकी के लिए उपलब्धि थी।"[24]

लेकिन अज्ञेय को इस सारे काण्ड की कोई जानकारी नही थी। उन्हे जब पता चला तो उन्हे बहुत कोफ्त हुई। वे तुरन्त हट गये। किन्तु शमशेर जी यही सोचते थे कि उन्हें समझना चाहिए था। ऊपरी औपचारिकताओ के बावजूद कहीं बहुत भीतर से शमशेर ने भी अपने को प्रेमा से असपृक्त कर लिया था। लेकिन वह खलिश बाकी थी। मलयज से बातचीत मे इसे उन्होने स्वीकार भी किया था जिसे उन्होने अपनी डायरी मे उधृत किया है" एक जिस व्यक्ति (प्रेमा) ने मेरी व्यक्तिगत समस्याओ में दिलचस्पी ली और उनको सुलझाने की कोशिश की, उसे मैने भी इतना लिफ्ट ही नही दिया। बाद में जब जरा उसकी बातों को कुछ गम्भीरता से लेना चाहा तो

देर हो चुकी थी। कुछ समय बाद और भी देरी हो चुकी थी। फिर तब तक मेरी समस्याए अपने-आप "रिजाल्वड" हो चुकी थी।[25]

शमशेर जी की यह असपृक्ति तब भी बरकरार रही जब प्रेमलता वर्मा ने डा0 तोला से शादी कर ली। शमशेर इस सारे कार्यक्रम के आयोजक-सयोजक-सभी कुछ थे। जैसा कि दूधनाथ जी ने लिखा है उन्होने अपने सम्बन्ध को "मैत्री के सतुलन मे बदल दिया। वे मुक्त होकर भी मुक्त नही हुए। जैसे कही कुछ हुआ ही न हो। . भीतर ही धसकन बाहर कही भी दिखाई नही पडती थी।"[26]

बहुत से तीर बहुत सी नावे बहुत से पर इधर
उडते हुए आए, घूमते हुए गुजर गए
मुझको लिए, सबके सब। तुमने समझा
कि उनमे तुम थे। नही, नही, नही।
उनमे कोई न था। सिर्फ बीती हुई
अनहोनी और होनी की उदास
रगीनियॉ थी। फकत।[27]

दिल्ली मे शमशेर जी अपने पत्रकार मित्र अजय सिंह व शोभा जी के साथ काफी दिनो तक रहे। अजय सिह ने एक बातचीत में बताया था "शमशेर से मेरा सम्पर्क 1969 मे दिल्ली मे हुआ। 1969 साल के आखिरी दिन। 1 जनवरी 1970 से हम लोग साथ रहने लगे लाजपतनगर मे। जब मैं मिला था तब शमशेर डिफेस कालोनी मे रहते थे। वहां से शिफ्ट करने की तैयारी कर रहे थे। मैंनें भी पैकिंग मे हाथ बंटाया था। 31 दिसम्बर 1969 को शिफ्ट किया

था। 1 जनवरी 1969 से लेकर 1980-81 तक हम लोग बराबर साथ रहे। शुरू मे दयानद कालोनी लाजपतनगर और 1977 मे हम लोग माडल टाउन मे शिफ्ट कर गये थे।"[28] अजय जी ने बताया कि "शमशेर जी समय से लेट होने पर ओवरटाइम करके कम्पेनसेट करते थे। वे जब दिल्ली विश्वविद्यालय मे "हिन्दी-उर्दू प्रोजेक्ट" पर काम करते थे अक्सर रात 9 बजे के बाद लौटते थे। उनमे आत्मसम्मान और स्वाभिमान गजब का था। कही भी दैन्य नही था।"[29] 1971 मे जब शमशेर जी 60 वर्ष के हुए थे तब षष्ठमूर्ति मनायी गयी थी बडे पैमाने पर। उसमे दिल्ली के जो भी कवि, लेखक, पत्रकार, सगीत, नृत्य की दुनिया से जुडेलोग थे सभी शामिल हुए थे। 1970 के बाद वाले दशक से उनके महत्व के आकलन का दौर शुरू होता है। लाजपतनगर मे रहते हुए उन्होने हिन्दी पाठको को उर्दू सिखाने के लिए हर हफ्ते "उर्दू पाठमाला" दिनमान मे लिखी। यह लगभग एक साल चला और पाठको मे बहुत लोकप्रिय हुआ था। दगो पर "घर की पाती बसता के नाम, "शोभा के लिए", "मोहन राकेश", "बैल", "अफ्रीका कम बैक" कविताए वही लिखी थी। अपनी पुरानी रचनाओ को ढूढ़कर छपने-छपाने के लिए तैयार किया। इनमे से कुछ पाण्डुलिपिया खो भी गयी। जैसा कि मलयज ने अपनी डायरी मे लिखा है।"जब से इस बी-86 वाले मकान मे शमशेर जी आए हैं, उनकी कई पाण्डुलिपिया खो गयी है। गोर्की के "आन लिटरेचर"का बहुत मेहनत से लगभग मूल के जैसा आनन्द देने वाला- किया हुआ अनुवाद, एक जापानी कहानी "कैनरी आईलैण्ड का अनुवाद और उनकी अग्रेजी की लगभग 300 कविताओ की कापी गायब हो गयी। इस मकान मे जब शुरू-शुरू मे आये तब अजय सिंह के एक न एक नौजवान दोस्त आते रहते । कोई-कोई हफ्तों वही रहते भी थे। शमशेर जी कभी मूड मे अपनी चीज वस्त बिखेर कर कोई चीज निकालते और उन लोगों को सुनाते।उन्हें शक है

कि उन्ही मे से किसी ने वे चीजे तिड़का दी है। उन्हे खो देने का मलाल वह ढो नही पाते।इसकी चर्चा पहले भी कईबार कर चुके हैं। ये सभी चीजे अप्रकाशित थी। शमशेर जी अपनी चीजो को पहले नष्ट कर देते थे। प्रगतिवाद के उस दौर मे रामविलास शमशेर की कविताओ के कटु आलोचक थे। शमशेर जी रामविलास की आलोचना से सहमत हो जाते और अपनी चीजो को रूग्ण और बेकार समझकर फाड़ डालते। इस तरह अपनी बहुत सारी चीजे उन्होने नष्ट की है। फिर उन्होने सकल्प किया कि अब वह अपनी चीजे नष्ट नही करेगे।इस सकल्प का हाताशाऔर "डिप्रेशन" के कई दौरो के गुजरने केबाद भी उन्होने पालनकिया।"[30]

1975 मे राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली से उनके सग्रह चुका भी हूँ मै नही" का प्रकाशन हुआ। 1977 मे उन्हे इसी सग्रह पर साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा मध्यप्रदेश साहित्य परिषद का तुलसी पुरस्कार प्राप्त हुआ था। इसी वर्ष शमशेर जी "उर्दू हिन्दी कोश" के प्रोजेक्ट से सेवानिवृत्त हुए थे। उन्होने फैज की कविताओ का सपादन भी इन्ही दिनो किया था जो राजकमल से छपा है।

1978 मे शमशेर जी ने सोवियत सघ की यात्रा की थी। श्री सुरेश शर्मा ने लिखा है कि "वहॉ से लौटकर आए तो रूसी भाषा के प्रति गहरे अनुराग से भरे थे। उन्ही दिनो एक दिन अचानक वे जे0एन0यू0 के रूसी भाषा केन्द्र मे मिले। वे पता करने आए थे कि क्या उनकी उम्र का आदमी रूसी भाषा सीखने के लिए प्रथम वर्ष का छात्र हो सकता है।"[31]

1980 मे "उदिता-अभिव्यक्ति का सघर्ष" का प्रकाशन दिल्ली के वाणी प्रकाशन से हुआ। इसमे शमशेर जी की प्रारम्भिक कविताएं संकलित हैं। इसी वर्ष राजकमल प्रकाशन से "इतने

पास अपने" सग्रह का भी प्रकाशन हुआ था। 1981 मे सभावना प्रकाशन हापुड से ""बात बोलेगी" सग्रह का प्रकाशन हुआ। इसी वर्ष "चुका भी हूँ नही मै" सग्रह का दूसरा सस्करण राधाकृष्ण प्रकाशन से छपा। 1981 मे ही शमशेर जी को मध्यप्रदेश कला परिषद के अन्तर्गत स्थापित प्रेमचन्द सृजन पीठ उज्जैन का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। यहा वे 1985 तक रहे। प्रेमचन्द पीठ उज्जैन से सेवानिवृत्ति के पश्चात शमशेर जी डा0 रजना अरगडे जो उन पर शोध कर रही थी के साथ सुरेन्द्रनगर गुजरात चले गये। दुर्भाग्य से इसी बीच उनका स्वास्थ्य खराब हो गया। अहमदाबाद सिविल अस्पताल मे उनका इलाज चला। स्वास्थ्य लाभ के पश्चात वे डा0 रजना के साथ सुरेन्द्रनगर मे ही रहने लगे।

1987 मे शमशेर जी को मध्यप्रदेश सरकार द्वारा स्थापित मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर भारत भवन भोपाल मे उनकी पेटिंग्स तथा उनके दस्तावेजो की प्रदर्शनी भी लगी थी। दूरदर्शन ने उन पर एक डाक्यूमेन्टरी भी बनायी थी।

1988 मे शमशेर की कविताओ का सग्रहकाल तुझसे होड़ है मेरी" का प्रकाशन हुआ। इसका व्यापक स्वागत हुआ। इसी वर्ष उनके गद्य लेखन का सग्रह "कुछ गद्य रचनाएं" भी छपकर आया। इसमे "दोआब" के निबन्धो के सग्रह के साथ ही "प्लाट का मोर्चा", सग्रह की कहानिया तथा उनके लिखे स्केच और डायरी के अंश सकलित थे। 1989 में "कुछ और गद्य रचनाए" का प्रकाशन हुआ। अब तक शमशेर समूचे भारतीय कविता ससार मे एक अत्यन्त महत्वपूर्ण हस्ताक्षर के रूप मे अपना स्थान बना चुके थे। उनकी कविताओ को नए-नए पाठक मिल रहे थे। भारतीय कविता मे उनके महत्व के आकलन का परिणाम था कि उनको 1989-90 के राष्ट्रीय

कबीर पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस सम्मान की जूरी समिति मे डा0 हरभजन सिह, डा0 यू0आर0 अनन्तमूर्ति, श्री कुवर नरायन, श्री कृष्ण खन्ना, श्री शख घोष, श्री जयन्त महापात्र, श्री शमशुर रहमान फारूकी, डा0 सौभाग्य कुमार मिश्र, श्री विष्णु खरे जैसे विभिन्न भारतीय भाषाओ के लेखक और विद्वान शामिल थे। इस अवसर पर प्रकाशित पुस्तिका मे शमशेर का परिचय देते हुए कहा गया था" श्री शमशेर बहादुर सिह न केवल हिन्दी बल्कि समूचे भारतीय कविता ससार मे एक शीर्ष स्थानीय कवि के रूप मे समादृत है। भारतीय कविता मे उन अग्रगामियो मे से है जिन्होने आज की कविता की भाषा और सम्वेदना दोनो के रूपाकार मे बुनियादी और क्रान्तिकारी परिवर्तन किये है। अपनी परम्परा मे गहरे रचे-बसे होने के साथ-साथ उन्होने कविता को नया साहस, निर्भयता और खुलापन दिया। शमशेर जी के यहा परम्परा भारतीय परम्परा के सच्चे और पुनर्नवा चरित्र के अनुरूप एकीकृत नही बल्कि बहुल हैं। उसमे पूर्वी दृष्टि है, मध्यपूर्व के प्रभाव है और आधुनिक यूरोप की अनुगूजे भी। शमशेर की भाषा मे एक सच्ची भारतीय आत्मा अपनी पूरी उत्सुकता और ग्रहणशीलता के साथ अपने क्लैसिकी रूपो और रोमानी सगतो दोनो मे ही चरितार्थ हुई है।"[32]

नवम्बर 1992 से जनवरी 1993 तक शमशेर जी वल्लभ विद्यानगर गुजरात मे डा0 रजना अरगड़े के साथ रहे। फरवरी 1993 मे वे अहमदाबाद लौट आए। उनका स्वास्थ्य लगातार खराब होता जा रहा था। अन्तत 12 मई 1993 को शमशेर जी ने देह त्याग दिया। यह एक युग की समाप्ति थी। आकाशगंगा की सर्वोच्च लहर अपने मे विसर्जित दिये को अपने साथ ले गयी। शमशेर जी जानते थे कि ऐसा ही होना है। क्योकि आकाशगंगा की सर्वोच्च लहर और

उसमे विसर्जित दीया उनके अपने भीतर थे। वह एक दरिया थे। उसमे उठने वाली लहरे भी स्वय थे। उनके पार अनन्त था। उसे क्षितिज पर आसमान की तरह धारण करने वाले भी वे ही थे।

सर्वोच्च लहर

आकाशगगा मे

आकाशगगा मे

विसर्जित

एक दीया,[33]

सदर्भ


1 मेरे बड़े भाई शमशेर जी, डा0 तेजबहादुर चौधरी, पृ0- 28

2 वही, पृ0 51

3 वही, उद्धरण, पृ0-51

4 वही

5 शमशेर की कविता, नरेन्द्र वसिष्ठ, पृ0-14

6 भूली बिसरी कुछ यादे, विश्वम्भर सिह पवार, सापेक्ष, शमशेर अक, पृ0- 217

7 शमशेर बहादुर सिह से विनोद दास की बातचीत, अर्न्तदृष्टि-2, पृ0-5

8 शमशेर बहादुर सिह से गोविन्द प्रसाद की बातचीत, आजकल, शमशेर अंक, पृ0-16

9. शमशेर बहादुर सिह से विनोद दास की बातचीत, अर्न्तदृष्टि-2 पृ0-5

10 मेरे बड़े भाई शमशेर जी, डा0 तेजबहादुर चौधरी, उद्धरण, पृ0-153

11 नीड का निर्माण फिर- बच्चन, उद्धरण नरेन्द्र वशिष्ठ, शमशेर की कविता, पृ0-17

12 शमशेर बहादुर सिह से विनोद दास की बातचीत, अर्न्तदृष्टि-2, पृ0-5

13 त्रिलोचन से रामकुमार कृषक की बातचीत, कल के लिए, शमशेर अक, पृ0-63

14 वही

15 एक चित्रकार की दृष्टि और कालबोध से समृद्ध कविता, राजीव सक्सेना, सापेक्ष, शमशेर अक, पृ0-205।

16 परिचय, दूसरा सप्तक, पृ0-84।

17 शमशेर से अजय सिह की बातचीत, कल के लिए, शमशेर अक, पृ0-69।

18 मेरे बडे भाई शमशेर जी, डा0 तेजबहादुर चौधरी, पृ0-185

19 वही, पृ0-190

20 है काम ये शायर का नही दिल शमशेर- हरिशकर परसाई, सापेक्ष, शमशेर अक, पृ0- 195

21 बाबा नागार्जुन से रामकुमार कृषक की बातचीत, सापेक्ष, शमशेर अक, पृ0-21

22 वही

23 लौट आ ओ धार- दूधनाथ सिह, पृष्ठ

24 वही, पृष्ठ

25 मलयज की डायरी के पन्ने, 23 दिसम्बर 70, आजकल, शमशेर अक, पृ0-52

26 लौट आ ओ धार- दूधनाथ सिंह, पृष्ठ

27 टूटी हुई, बिखरी हुई, कुछ और कविताए, पृ0-135

28 अजय सिह से बातचीत, लखनऊ

29 वही

30 मलयज की डायरी के पन्ने, 7 अप्रैल 1977, पृ0-54

31 कवि का जीवन, सुरेश शर्मा, विपाशा जुलाई-अगस्त 1993, पृ0-8

32 कबीर सम्मान के अवसर पर प्रकाशित पुस्तिका से, सापेक्ष, शमशेर अक, पृ0-108

33 अतिम कविता 13 जून 1992, गाधीनगर।

# अध्याय-2

## शमशेर का काव्यदर्शन

(क) कविता और कला सम्बन्धी शमशेर के विचार

(ख) भाव, विचार और कला की पारस्परिकता या अन्तर्सम्बन्ध

(ग) कविता और सामाजिक, राजनैतिक मूल्य जीवन दृष्टि और विश्वदृष्टि

(घ) काव्य और विचारधारा के रिश्ते- शमशेर की नजर मे

( ङ) सौदर्य दृष्टि और कलात्मक अनुशासन

**क- कविता और कला सम्बन्धी शमशेर के विचार**

"कविता मे हम अपनी भावनाओ की सच्चाई खोजते है। उस खोज मे उस सच्चाई का अपना खास रूप भी हमे मिलना ही चाहिए, जिस हद तक भी मुमकिन हो। क्योकि किसी भी चीज का असली रूप उस चीज से अलग तो सभव नही।"[1]

शमशेर की कविता भावनाओ की सच्चाई की खोज की कविता है। वे अपनी निजी अनुभूति को बहुत ही महत्व देते है। वे अपनी कविता मे वाह्य यथार्थ को अपनी निजी अनुभूति की कसौटी पर कसते है। यहा वे किसी प्रकार का समझौता नही कर सकते। मलयज ने उनके बारे मे लिखा है "शमशेर जी की सासत और सघर्ष उस बाहर को अपना लेने को लेकर नही- आदर्श को सच कर देने को लेकर नही- बल्कि अपने भीतर को नष्ट न होने देने को लेकर है। वे बाहर को भी भीतर की ही शर्त पर चाहते है - क्योकि भीतर ही तो उनका वह कला-विवेक निवास करता है जो उनको वाह्य मोर्चे पर हर शिकस्त मे उन्हे टूटने-बिखरने नही देता।"[2] और शमशेर का यह कला-विवेक बहुत ही परिष्कृत और व्यापक है। उसमे दुनिया-जहान की चिताए है तो सौदर्य की विलक्षण अभिव्यक्ति भी। लेकिन कही भी सरलीकरण नही है। अपनी काव्यात्मक ऊचाई से वे कही नीचे उतरना नहीं चाहते। 'कुछ और कविताएं" की भूमिका मे शमशेर लिखते है "कवि का कर्म अपनी भावनाओ मे अपनी प्रेरणाओं मे, अपने आन्तरिक सस्कारो मे समाज सत्य के मर्म को ढालना- उसमे अपने को पाना है, और उस पाने को अपनी पूरी कलात्मक क्षमता से, पूरी सच्चाई के साथ व्यक्त करना है, जहा तक वह कर सकता हो।"[3] यहा लगता है कि शमशेर के लिए "काव्यानुभूति और जीवनानुभूति एक ही वस्तु है।"[4] शमशेर

का मानना है कि "सारे कवि- कलाकार- व्यक्तियो सहित, हम सब, समाज रूप से एक गतिशील इतिहास का अग है।"[5] कवि-कलाकार चूँकि गतिशील इतिहास का अग है अत अपने सामाजिक परिवेश के साथ उनका जीवत सम्बन्ध होता है। अपने परिवेश से कवि बहुत कुछ ग्रहण करता है और अपने काव्य-व्यक्तित्व के निर्माण मे उसकी सहायता लेता है। समाज के अन्दर चलने वाली गतिविधिया उसकी रचना-प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं। यहा से वह अपने सस्कार ग्रहण करता है। कवि शमशेर ने हमेशा इस बात पर जोर दिया है कि कवि-कलाकार को अपनी काव्य-परम्परा की गहरी जानकारी तो होनी ही चाहिए साथ ही उसे लोककलाओ तथा लोक मे चल रही अत क्रियाओ का भी सूक्ष्म ज्ञान होना चाहिए। इसके बिना उसकी वाणी मे वह ओज और खरापन नही आ पायेगा जो किसी कवि को जनता का प्रामाणिक और सच्चा कवि बनाता है। आश्चर्य नही कि शमशेर के सबसे प्रिय कवि निराला है। निराला शमशेर के लिए सघनतम की ऑख है। कवि जब भी भटकता है निराला ही पथ प्रदर्शन करते हैं। शमशेर जी का मानना है- "कलाकार के लिए सच्चे अर्थ मे उबरने का एक ही रास्ता है, और वह यह कि वह पूरे समाज के जीवन मे अपने-आपको मिला दे: खो न दे, मिला दे। जहाँ-जहॉ भी कलाकार ने अपने जीवन मे इस सामाजिकता को गहरा और सार्थक किया है, वहाँ-वहाँ उसको असाधारण शक्ति, मार्मिकता और गहराई मिली है।"[6]

शमशेर की महत्वाकांक्षा इस सामाजिकता के आदर्श को प्राप्त कर लेने की है। किन्तु उनके काव्य व्यक्तित्व की बनावट मे कही कुछ ऐसा है जो उन्हे इस आदर्श को प्राप्त करने से रोकता है। शमशेर को इसका गहरा अहसास है "एक दौर था जब मैं ऐसी चीजें लिखने के लिए

अधिक उत्सुक था, उसके लिए अपने अन्दर काफी प्रेरणा महसूस करता था। पर अपेक्षित स्तर मुझे सदा अपने कवि-व्यक्तित्व की पहुच से बहुत ऊँचा और असम्भव सा महसूस होता। फिर भी मैने अपनी प्रेरणाओ को कुछ ऐतिहासिक सत्यो से जोड़ने की उनके धर्म को अपनी धडकन के साथ व्यक्त करने की कोशिश की। फिर भी मै यह दोहराकर कहना चाहूगा कि जहा तक मेरी निजी उपलब्धि है, वही तक मै उसे दूसरो के लिए भी, मूल्यवान समझता हूॅ। अर्थात् कविता मे सामाजिक अनुभूति काव्यपक्ष के अन्तर्गत ही महत्वपूर्ण हो सकती है।"[7]

काव्यपक्ष पर शमशेर का बहुत जोर है। अगर कविता भावनाओ की सच्चाई है तो उसकी अभिव्यक्ति पूरी कलात्मक क्षमता के साथ होनी चाहिए। तभी उसका कुछ महत्व होगा। वे जानते है कि "कविता शिल्प वैचित्र्य नही है, मगर इसमे सन्देह नही कि शिल्प और जीवन की अनुभूति यानि कला और काव्यवस्तु दोनो को पुष्ट, स्वस्थ और गहरा करने जाना ही निरन्तर एक समस्या है।"[8]

इस समस्या से वे अपने स्तर पर जूझते हैं और पाते है कि एक स्तर पर कथ्य और रूप मे कोई भिन्नता नही रह जाती। इस अभिन्नता की प्राप्ति किसी भी बड़े कलाकार की उपलब्धि है। यह उसकी अभिव्यक्ति को एक क्लैसिकल सरलता प्रदान करती है। इस क्लासिकी सरलता को पाने की अभिलाषा हमेशा शमशेर मे रही है। किन्तु "उनकी बनावट ऐसी है कि चीजो के प्रति वस्तुवादी रूख अपनाना न सिर्फ उनके बूते की बात नही, वरन् वैसा करने मे उन्हे अपनी पराजय दीखती है। वह कुछ कुछ इसे अस्वाभाविक अप्राकृतिक भी मानते हैं और तिस पर मजा यह है कि वह अपना लक्ष्य हमेशा एक क्लासिकी वस्तुवादिता ही मानते हैं- वह जो भावनाओं के गदले प्रवाह से दूर निर्मम स्फटिक सच्चाई की तरह पारदर्शी और शाश्वत नियमों की तरह व्यक्ति

निरपेक्ष हो।"[9]

शमशेर ने जहा इस वस्तुनिष्ठता को प्राप्त किया है वहा उनकी कविता भी उस क्लासिकी टोन को पाने मे सफल रही है। सामाजिक-राजनैतिक विषयो पर लिखी उनकी कविताए इसका उदाहरण है। उनकी राजनैतिक कविताए घोषित रूप से प्रतिबद्ध कविता लिखने वालो की कविताओ से ज्यादा कारगर है और इन कविताओ को पाने के लिए शमशेर ने कही भी उनकी कलात्मकता को अनदेखा नही किया है।

'दूसरा सप्तक' के वक्तव्य मे शमशेर ने लिखा था "सुन्दरता का अवतार हमारे सामने पल-छिन होता रहता है। अब यह हम पर है, खासतौर से कवियो पर, कि हम अपने सामने और चारो ओर की इस अनन्त और अपार लीला को कितना अपने अन्दर घुला सकते हैं।"[10] किसी ने कहा है कि हिन्दी मे विशुद्ध सौन्दर्य का कोई कवि हुआ है तो वह शमशेर हैं। शमशेर सौन्दर्य के माध्यम से ही जीवन के शुद्धतर मूल्यो का शोध करते है। उनका अपने आस-पास का निरीक्षण बहुत सूक्ष्म होता है। सामान्य चीजो मे वे सौन्दर्य देख लेते हैं। उनका कला-विवेक यहा बहुत सक्रिय होता है। उनका मानना है कि सभी कलाए अन्तरावलम्बित हैं। वे अपनी अभिव्यक्ति मे सौष्ठव लाने के लिए विभिन्न ललित कलाओ का सहयोग लेते हैं। उनका मानना है कि सभी कलाओ का लक्ष्य अतत: एक है। दूसरे सप्तक के अपने वक्तव्य में उन्होने लिखा है "तस्वीर, इमारत, मूर्ति, नाच, गाना और कविता- इन सबमें, बहुत कुछ एक ही बात अपने-अपने ढग से खोलकर या छिपाकर या कुछ खोलकर कुछ छिपाकर कही जाती है। मगर इनके ये

अलग-अलग ढग दरअसल एक-दूसरे से ऐसे अलग-अलग नही है, जैसे कि ऊपरी तौर पर लगते है।"[11] उनके इसी वक्तव्य को पढ़कर डा0 विजय देव नारायण साही निष्कर्ष निकालते हैं कि "सच तो यह है कि शमशेर की सारी कविताए यदि शीर्षक हीन छपे, या उन सबका एक ही शीर्षक हो, "सौन्दर्य, शुद्ध सौन्दर्य' तो कोई अन्तर नही पडेगा।"[12] किन्तु यह भी एक प्रकार का सरलीकरण है। शमशेर इस तरह के किसी सरलीकरण मे विश्वास नही करते। 'दूसरा सप्तक' के वक्तव्य मे ही उन्होने लिखा है " . अपने चारो तरफ की जिन्दगी मे दिलचस्पी लेना, उस को ठीक-ठीक यानि वैज्ञानिक आधार पर (मेरे नजदीक यह वैज्ञानिक आधार मार्क्सवाद है) समझना और अनुभूति और अपने अनुभव को इसी समझ और जानकारी से सुलझा कर स्पष्ट करके, पुष्ट करके अपनी कला-भावना को जगाना यह आधार इस युग के हर सच्चे और ईमानदार कलाकार के लिए बेहद जरूरी है। इस तरह अपनी कला-चेतना को जगाना और उसकी मदद से जीवन की सच्चाई और सौन्दर्य को अपनी कला मे सजीव से सजीव रूप देते जाना इसी को मै 'साधना' समझता हूँ और इसी मे कलाकार का सघर्ष छिपा हुआ देखता हूँ। कला मे भावनाओ की तराश-खराश, चमक, तेजी और गरमी सब उसी से पैदा होगी। उसी 'सघर्ष' और 'साधना' से जिसमे अन्तर-बाहर दोनो का मेल है।"[13] शमशेर सौन्दर्य का आविष्कार इस अन्तर-बाहर के मेल से करते है। तभी तो उनकी लम्बी उड़ानो की वायवीयता मे भी हम जीवंत और माँसल सौन्दर्य का अनुभव कर पाते हैं। उनकी कला-दृष्टि से अमूर्त कविताओ मे भी एक ऐन्द्रिकता का दर्शन करते है। ऐसा इसलिए संभव होता है क्योंकि शमशेर का मानना है "कला की अभिव्यक्ति व्यक्ति और समाज की आशाओं-आकांक्षाओं और क्षणिक समर्थताओं का एक

सजीव और गतिशील दर्पण है। इस दर्पण मे हम अपनी शक्ले देखते नही पहचानते और समझते है।"[14]

शमशेर यूरोप के कला आन्दोलनो से भी प्रभावित रहे है। इम्प्रेशनिज्म और सुर्रियलिज्म का प्रभाव उन्होने स्वीकार किया है। मुक्तिबोध ने कहा था "शमशेर ने अपने हृदय मे आसीन चित्रकार को पदच्युत कर, कवि को अधिष्ठित किया है।"[15] चित्रकला तथा कविता इन विधाओ का द्वन्द्व शमशेर की कविता मे दिखाई देता है। मलयज से बातचीत मे उन्होने कहा था "पर मैने अपनी चित्रकारी के शौक को कविता मे काफी पूरा किया मैने चीजो को अक्सर पेटिंग की शक्ल मे ग्रहण किया है, भले ही उनका कोई वाह्य रूपाकार न हो, रग न हो, पर रगो के प्रभाव उनमे है- रगो के भावात्मक रूप। मेरे कविताओ मे जो इम्प्रेशिनिज्म की बात कही गयी है वह यही है- मैने मन पर पड़ने वाले प्रथम प्रभाव को ज्यो का त्यो यत्नपूर्वक शब्दो मे ट्रासफर करने की कोशिश की है।"[16]

इस दृष्टि से शमशेर अद्वितीय कवि हैं कि उन्होने दो भिन्न विधाओ का अधिकतम सामजस्य अपनी कविता मे किया है। यूरोप के अतियथार्थवादी आन्दोलन का प्रभाव भी उन पर रहा है। सगमरमर का सा ठोस और ठडा सौन्दर्य वह अपनी कविता मे चाहते है। किन्तु यहा पहुच कर उन्हे लगता है कि यहा तो सब-कुछ जड़ हो रहा है। वे जल्दी ही इससे हट जाते हैं। "प्रयोगवाद नर्वस ब्रेकडाउन का आर्ट है"[17] शायद इसी मन· स्थिति से यह निष्कर्ष निकला होगा।

अपनी कविता में शमशेर निरन्तर प्रयोग के हामी हैं। उनके लिए प्रयोग कोई वाद नहीं,

साध्य नही बल्कि साधन है। अपनी अभिव्यक्ति को निरन्तर विकसित और व्यापक बनाने के लिए वे प्रयोग करते है।

मलयज से बातचीत मे शमशेर ने कहा था "कविता के माध्यम से मैने प्यार करना, अधिक से अधिक चीजो को प्यार करना सीखा है। मै उसके द्वारा सौन्दर्य तक पहुचा हूॅ। मेरी चेतना इतनी, कह लो कि कडीशड हो चुकी है, कि हर चीज मे मुझे एक अत सौन्दर्य दिखाई देता है, बिना किसी अतिरिक्त काशस प्रयत्न के, सौन्दर्य का पूरा एक कम्पोजीशन दृश्य जगत पहले मेरी नजर मे सौन्दर्य के एक कम्पोजीशन के रूप मे ही आता है मै उससे प्रभावित होता हूॅ काव्य की कुछ उपलब्धियॉ निगेटिव मूल्य के रूप मे होती है, समझ लो कि यह बरबस सौन्दर्य के एक खाके मे अपने को अनायास महसूस कर लेना मेरी कविता की यही निगेटिव उपलब्धि है।"[18] किन्तु यह शमशेर जी की विनम्रता है। इसका उदाहरण उनकी एक "बैल"कविता ही है जहा वे अपनी वस्तु तथा उसके अभिव्यक्ति लाघव से हमे चमत्कृत करते है। "बैल" पर किसने इतनी सुन्दर तथा प्रामाणिक कविता लिखी होगी?

**संदर्भ**

1 दूसरा सप्तक : वक्तव्य, पृष्ठ 87।

2. बात बोलेगी, पर कब? मलयज, सापेक्ष, शमशेर अक पृष्ठ 53।

3. भूमिका : कुछ और कविताए, पृष्ठ 75।

4 शमशेर की काव्यानुभूति की बनावट : बी0डी0एन0 साही, शमशेर- सम्पादक :

सर्वेश्वर, मलयज, पृष्ठ 27।

5 शमशेर के साथ थोड़ी-सी गप्पे उद्धरण सोमदत्त, सापेक्ष, शमशेर अक, पृष्ठ 38।

6 कला और साहित्य मे प्रयोगवाद', कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 173

7 भूमिका कुछ और कविताए, पृष्ठ 76

8 शमशेर के साथ थोड़ी-सी गप्पे उद्धरण, सोमदत्त, सापेक्ष, शमशेर अक पृष्ठ 38

9 डायरी मलयज 9 दिसम्बर, 1967, आजकल, शमशेर अक

10 दूसरा सप्तक वक्तव्य, पृष्ठ 87

11 वही

12 शमशेर की काव्यानुभूति की बनावट बी डी एन साही, शमशेर-सपादक · सर्वेश्वर, मलयज, पृष्ठ 25

13 दूसरा सप्तक वक्तव्य, पृष्ठ 87

14 अमूर्तकला, कुछ और गद्य रचनाए पृष्ठ 165

15 शमशेर · मेरी दृष्टि मे, मुक्तिबोध, शमशेर-सपादक सर्वेश्वर, मलयज, पृष्ठ 12

16 बात बोलेगी, पर कब ? मलयज, सापेक्ष, शमशेर अक, पृष्ठ 55

18. बात बोलेगी, पर कब ? मलयज, सापेक्ष, शमशेर अंक, पृष्ठ 49

## ख. भाव, विचार और कला की पारस्परिकता या अर्तसम्बन्ध

"केवल विचारधारा या केवल 'इमोशस' के बल पर बडा काम नही किया जा सकता। इसके लिए गम्भीर तैयारी की जरूरत होती है।"[1]

शमशेर का मानना है कि एक कवि अपनी अभिव्यक्ति मे सफल तभी हो सकेगा जब उसे अपने देश की काव्य परम्परा का गहरा ज्ञान होगा। इसके साथ ही उसे विश्व के महान काव्यों की जानकारी होनी चाहिए। इसी को वे 'गम्भीर' तैयारी कहते है। इस गभीर तैयारी के अभाव मे उनका मानना है कि "कवि जल्दी ही चुक जाते है और कविता लिखी जाते ही प्राय निरर्थक हो जाती है।"[2] इससे जाहिर है कि कवि शमशेर कविता की रचना प्रक्रिया मे भाव और विचार के साथ उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति को भी बराबर का वजन देते है। वस्तुत उनकी दृष्टि मे भाव, विचार और कला मे परस्पर अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। इनमे से किसी एक के बिना बाकी दो का काम नही चल सकता। जिस प्रकार विचार के अभाव मे किसी साहित्यिक कृति की कल्पना नही की जा सकती उसी प्रकार यह जरूरी नही कि हर प्रकार के विचार की अभिव्यक्ति साहित्यिक कृति मे हो सकती है। यदि विचार झूठा हो तो साहित्यिक कृति की कलात्मक श्रेष्ठता अनिवार्यत प्रभावित होगी। प्रसिद्ध रूसी विचारक प्लेखानोव के शब्दो मे कहे तो "And when a false idea is made the basis of a literary work, it imparts to it inherent contradictions that inevitably detract from its aesthetic merit "[3]

विचारधारा का किसी कवि की रचना प्रक्रिया पर क्या प्रभाव पड़ता है इसे वे शील जी तथा धर्मवीर भारती के उदाहरण से समझाते हैं- "रचनाकार की विचारधारा का उसकी रचना

प्रक्रिया पर क्या असर पडता है, इसकी बडी दिलचस्प मिसाल शील की है। शील की प्रारम्भिक रचनाए छायावादी भाषा-शैली मे है, लेकिन मजदूरो के बीच रहने के कारण आन्दोलन की जरूरत के मुताबिक उन्होने उसी छद विधान या 'पैटर्न' को अदर से बदला। उन्होने गीत लिखे, मुक्त-छन्द नही।"[4] दूसरी तरफ डॉ धर्मवीर भारती के बारे मे वे लिखते है "उनके अधायुग मे उनके युवाकाल का आवेश है और वह आवेश पूरी शक्ति के साथ उसमे व्यक्त हुआ है, लेकिन वह सचेत रूप से प्रगतिवाद विरोधी ऐजेडा लेकर लिखा गया है और मेरे देखते इस गलत दृष्टि या विचारधारा का प्रभाव उनकी रचना प्रक्रिया पर यह पड़ता है कि वे 'अधायुग लिखने के बाद लगभग चुक जाते है।"[5]

शमशेर जानते हैं कि विचारधारा अगर किसी कलाकार की अभिव्यक्ति मे मार्मिकता लाकर उसे प्रामाणिक बना सकती है तो दूसरी तरफ उसके कुछ खतरे भी है। उनका मानना है कि रचनाकार किसी आन्दोलन से दो तरह से जुड़ता है, एक केवल वैचारिक रूप से तथा दूसरे वैचारिक के साथ-साथ सामाजिक स्थिति या कर्म के स्तर पर। वे इस सामाजिक स्थिति या कर्म के स्तर को बहुत महत्व देते है क्योकि उनका मानना है कि "अमल अनुभव की तीसरी आँख खोल देता है, जिसकी प्रखर रोशनी मे अपनी कमजोरियां और बैरी-दुश्मन के मनसूबे सब जल जाते है। बशर्ते कि वह ऑख खुली रहे- अमल के रास्ते की तरह, अबाध जनशक्ति की तरह। बन्द न हो क्योकि अन्त मे विजय तो उसी की है।"[6]

शमशेर पन्त जी के माध्यम से समझाते हैं कि वे प्रगतिशील आन्दोलन से केवल वैचारिक रूप से जुड़े, सामाजिक स्थिति या कर्म से नहीं, इसलिए उनकी कविताएं वक्तव्य के स्तर

पर ही रह गयी। जबकि निराला घोषित रूप से प्रगतिशील आन्दोलन से न जुडकर भी अपनी कविता मे वह भाव ला सके। ऐसा इसलिए हुआ क्योकि "केवल भावुक कल्पना के माध्यम से ही समाज के प्राणमय तत्वो से व्यक्ति का सम्बन्ध कैसे स्थापित हो सकता है? अपने चारो ओर के समाज की समस्याओ को अपनी समस्या बनाकर, उसके सघर्ष को अपना सघर्ष बनाकर ही तो हम उसके विविध गतिमय प्राणमय सचलित तत्वो को अपने अन्दर अनुभव कर सकेगे।"[7]

निराला की सरलता इसी मे है कि वे इन विविध गतिमय प्राणमय सचलित तत्वो को अपने अन्दर घुला ले गए थे। शमशेर का जोर इस बात पर है कि "हमे भावो का क्रियात्मक रूप पकडना है। मानव ट्रेजडी के गहन गह्वरो मे सिर्फ इसलिए झॉकना है कि उनमे 'जीवन के सस्कार', 'भावी सस्कृति के उपादान', और 'मनुष्यत्व के मूलतत्व' मिल सके, कि जिससे 'नव मानवता' का निर्माण हो सके।"[8]

इस 'नव मानवता' का निर्माण हम तभी कर पायेगे जब हम अपने भावो को 'क्रियात्मक' रूप दे सकेगे और अपने भावो को क्रियात्मक रूप देने के लिए जरूरी नही कि हम किसी दल या पार्टी से 'कमिटेड' ही हो। जो साहित्यकार "द्वन्द्वात्मक यथार्थ की सचेतन रूप से ग्रहण की जाने वाली जमीन- निरन्तर सघर्ष द्वारा अमल-दखल मे लायी जाने वाली सामाजिक यथार्थ की यही बौद्धिक जमीन।"[9] पर अपने पाव जमाएगा वही अपनी रचनाओ मे प्राण भर सकेगा। मुक्तिबोध इसीलिए उनको अपनी अभिव्यक्ति मे सफल लगते हैं क्योकि "उनके अन्दर मस्तिष्कहीन कोरी भावुकता नहीं है। उनके भावो के ज्वार के पीछे विचारो का दीर्घ दोहन है। वह युग के उस चेहरे की तलाश करते हैं जो आज के इतिहास के मलबे के नीचे दब गया है, अगर वह मरा

नही है। जिन अनुभूतियो को इस कडियल कवि ने झेला है उनमे लगातारजीकर, उनकी अग्नि परीक्षा देकर वह आ खडा हुआ है जहा वह प्रत्येक सघर्षशील देश और जनता का अपना हो गया है।"[10]

यानि कि शमशेर केवल भावो को ही कविता के सृजन के लिए महत्वपूर्ण नही मानते बल्कि 'विचारो' के दीर्घ दोहन' पर भी बल देते है। किसी भी रचनाकार को अपना ठोस आधार विचारो की इसी आधार-भूमि पर मिलता है। केवल भावो के सहारे हम काव्य के वस्तु की ऊपरी सतह भले ही छू ले उसकी गहराई को नही नाप सकते। इसी तरह केवल विचारो की सहायता से हम जीवन के मर्म को नही जान सकते। इनमे सतुलन जरूरी है। शायद इसीलिए मुक्तिबोध उनके प्रिय कवि है "क्योकि वह मुझसे इतना भिन्न है। एब्स्ट्रैक्ट नही, ठोस। बहती हवाओ सा लिरिकल, अर्थहीन सा कोमल, न कुछ नही बल्कि प्रत्येक पक्ति मे चित्र केउभार को और भी घूरती और भी ताड़ती हुई ऑख से प्रत्यक्ष करता हुआ। अनुभूति के यथार्थ से कतराता हुआ नही बल्कि अपने तर्क और भावना के कुशन से अनुभव की कड़ी धरती को लगातार गहरे खोदता जाता।"[11]

एक रचनाकार अपने समाज मे उठने वाली तरगो की, उनमे चलने वाले संघर्षों, उनके उत्सवों और शोक की जितनी गहरी पहचान रखेगा उतना ही उसकी काव्य-अभिव्यक्ति मे मार्मिकता आयेगी। अंततः एक रचनाकार अपना खाद-पानी अपने समाज से ही ग्रहण करता है। समाज में चलने वाले संघर्षों से एक रचनाकार की जितनी गहरी संपृक्ति होगी वह उतना ही अपने अनुभव में प्रामाणिकता ला पायेगा। समाज से व्यापक संपृक्ति के चलते एक रचनाकार की".....कविता

का फार्म ही नही बदलता, परम्परागत शब्दो के अर्थ तक बदल जाते है।"[12]

क्योकि एक मौलिक रचनाकार की कोशिश रहती है और वह जानता है कि "काव्य वस्तु की वास्तविकता- ठोसपन, ठसपन नही- चाहे फिर वह वास्तविकता कितनी ही छोटी हो- मगर वास्तविकता जो कि दूसरे के दिल की मुट्ठी मे कुछ-कुछ आ जाती हो।"[13]

**सदर्भ**


1 सामाजिक सत्य और रचना का माध्यम, कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 15

2 वही

3 आर्ट एण्ड सोशल लाइफ, सेलेक्टेड, फिलासोफिकल वर्क्स, प्लेखानोव, पृष्ठ 659

4 सामाजिक सत्य और रचना का माध्यम, कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 14

5 वही, पृठ 15

6 राष्ट्रीय बसत की प्रथम कोकिला, दोआब, कुछ गद्य रचनाए, पठ 44

7 सात आधुनिक हिन्दी कवि, दोआब, कुछ गद्य रचनाएं, पृष्ठ 85

8 ग्राम्या- एक परिचय, दोआब, कुछ गद्य रचनाए, पृष्ठ 58

9. नामवर, कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 152

10 जीवन जो हारा नहीं खत्म हो गया, कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 143

11 भूमिका चॉद का मुँह टेढ़ा है, पृष्ठ 19

12 सामाजिक सत्य और रचना का माध्यम, कुछ और गद्य रचनाएं, पृष्ठ 14

13 डायरी : शमशेर जनवरी 52, कुछ गद्य रचनाए, पृष्ठ 272

## ग. कविता और सामाजिक, राजनैतिक मूल्य : जीवनदृष्टि और विश्वदृष्टि

"सामाजिक सम्बन्धो का जो सौन्दर्य और आकर्षण जीवन के अवरुद्ध द्वार खोलकर व्यक्ति की सब शक्तियो को मुक्त और उल्लासपूर्ण नही करता, एक खुली हॅसी की चमक सी उसके अग-अग मे नही भरता, वह एक बहुत गलत और बीमार चीज है।"[1]

"तमाम कला राजनीति है। यह एक अति परिचित और यथार्थ उक्ति है। जिस कला मे राजनीति नही है, वह कला नही। बनार्ड शॉ और इब्सन के जमाने से लेकर ब्रेश्ट और आधुनिक इटली के अनेक विश्व विख्यात फिल्म-निर्देशक तक यही बात दुहराते आये है। कोरी राजनीति नही वह 'राजनीति' जिसमे आम आदमी की आशाए- आकाक्षाए सुलगती है। हर सच्चा कलाकार- देखा जाय, तो हर युग मे- उसी अग्नि का ताप झेलता है।"[2]

कोई भी रचनाकार जिस समाज मे रहता है उसके कुछ अपने सामाजिक, राजनैतिक मूल्य होते है। समाज ये मूल्य अपने अन्दर चलने वाली क्रिया-प्रतिक्रियाओ तथा सघर्षो की एक लम्बी श्रृखला से अर्जित करता है। इनके पीछे एक सामूहिक दृष्टि (Collective vision) होता है। यह सामूहिक दृष्टि जनाकाक्षाओ के मेल से ही उपलब्ध होती है। इसमे एक जाति का अनुभव, उसके सुख-दु ख, उसकी आशाओ-आकांक्षाओ, उसके शोक तथा उत्सवो का प्रतिबिम्बन होता है। एक सच्चा रचनाकार इन मूल्यो को अनदेखा नही कर सकता। बल्कि इनसे प्रेरणा लेकर अपनी भावनाओं को एक सुदृढ़ आधार प्रदान करता है। इसी से उसकी वाणी मे मार्मिकता आती है। इसी गुण के कारण वह जनता का अपना कवि बनता है। मुक्तिबोध के शब्दो मे कहे

तो ऐसा रचनाकार 'समाज का अनुभव केन्द्र' होता है। शमशेर इसमे विश्वास करते है। तभी उनका मानना है कि "कला की अभिव्यक्ति व्यक्ति और समाज की आशाओ-आकाक्षाओ और क्षणिक समर्थताओ का एक सजीव और गतिशील दर्पण है। इस दर्पण मे हम अपनी शक्ले देखते नही- पहचानते और समझते है।"[3]

समाज के दर्पण मे अपनी पहचान और समझ से ही कोई कवि अपनी जीवनदृष्टि विकसित करता है। अपने समय की इस अचूक 'पहचान' और गहरी 'समझ' के कारण उसकी रचनाओ मे हम प्रामाणिकता पाते है। इसी समझ के बूते पर वह एक नए समाज के निर्माण का स्वप्न देखता है। यह स्वप्न उसका अपना व्यक्तिगत स्वप्न नही होता बल्कि यह पूरी जाति का स्वप्न होता है। उसकी रचनाओ से पूरी जाति एक नए सघर्ष और नवनिर्माण की आकाक्षा से उठ खड़ी होती है। शमशेर जी ने अपने निबन्धो के सग्रह 'दोआब' मे हाली के 'मुसद्दस' तथा मैथिली शरण गुप्त की 'भारत-भारती' के तुलनात्मक अध्ययन मे नवनिर्माण की इन्ही आकाक्षाओ को रेखाकित किया है। शमशेर लिखते है "हाली जन-समाज के बढ़ते हुए आत्मविश्वास को, लोकतत्र की बढ़ती शै को, आने वाले आन्दोलनो को, धुधला-धुधला मगर असदिग्ध रूप से महसूस कर रहे थे। इसीलिए इस्लाम का लोकतत्रवादी पहलू अपने पाठको के सामने रखा और अपने नबी को एक पेशवा, लगभग एक नए राष्ट्र के प्रेसिडेन्ट का सा दर्जा दिया- एक श्रेष्ठ मानव का, देवता का नही . ।"[4]

हाली जनसमाज की इन हलचलों को इसलिए महसूस कर पाये क्योकि उस समय की यही राजनैतिक तथा सामाजिक मांग थी। उनकी पृष्ठभूमि मे सर सैयद अहमद खाँ द्वारा चलाया

जा रहा सुधार आन्दोलन था। इस आन्दोलन ने एक रचनाकार को प्रेरित किया और "हाली ने भी अपनी कविता का पुराना स्वर बदल दिया और जाति और देश के लिए मगलकारी उद्देश्यपूर्ण रचनाए लिखना आरम्भ कर दी।"[5]

मैथिलीशरण गुप्त जी ने भी 'भारत-भारती' की रचना इन्ही सुधार आन्दोलनो से प्रेरित होकर की थी। किन्तु प्राचीन भारत का स्वर्णिम अतीत उनकी ऑखो से ओझल नही होता। उनका स्वप्न उसी आदर्श समाज की पुन स्थापना है। इसीलिए "मुसद्दस और भारत भारती दोनो अपने वर्ण्य विषय और उद्देश्य मे समान है, पर भिन्न 'देशकाल' के प्रभाव से उनके निहित दृष्टिकोण और भावनाओ के रूप मे कुछ अन्तर आ गया है- मौलिक अन्तर।"[6] और इस मौलिक अन्तर के चलते शमशेर महसूस करते हैं कि गुप्तजी" अपने समय की प्रगति से कुछ पीछे पड़ गए- से जान पडते है।"[7] इसीलिए शमशेर को लगता है कि 'हिन्दी मे हाली का समानान्तर साहित्यकार वास्तव मे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र है।"[8] और ऐसा उन्हे इसलिए लगता है क्योकि "हाली और भारतेन्दु जी के समय मे सामाजिक सुधार और राष्ट्रीय जागरण की नव-युगीन चेतना, पजाब और युक्तप्रान्त मे अपने तीव्रतम रूप मे उभरी हुई थी। इन दोनो महान साहित्यकारो का गद्य और पद्य उस युग की पूर्ण स्फूर्ति लिए हुए है। उस युग की विचारधारा मे अपनी भाषाओ के ये दोनो प्रथम और अग्रणी खेवा है।"[9]

शमशेर जब "मुसद्दस" तथा "भारत-भारती" पर अपना निबन्ध लिख रहे थे वह जमाना भी राष्ट्रीय भावनाओं के उठान का था। आजादी मिलने में अभी एक साल बाकी था।

विजय मिलने को ही थी। पूरा राष्ट्र एक नए विश्व मे अपनी आने वाली भूमिका को लेकर उत्साहित था। द्वितीय विश्वयुद्ध खत्म हो चुका था। उसके साथ ही विश्व मे बडे-बडे परिवर्तन घटित हो रहे थे। शमशेर इन परिवर्तनो को बडे गौर से देख रहे थे। अपने समय की युवा पीढ़ी का उत्साह उनमे भी हिलोरे ले रहा था। अपने 'मुसद्दस' और भारत-भारती की सास्कृतिक भूमिका वाले लेख मे ही उन्होने आह्वान के स्वर मे लिखा था" अस्तु, आज दूसरे विश्वव्यापी महाभारत के बाद- जब सयुक्त लोक-शक्ति फासिज्म को, अन्तिम नही, तो निर्णयात्मक रूप से अवश्य ही हरा चुकी है, जब 'राष्ट्रीयता' की विभिन्न परिभाषाए देश-विदेश मे प्रचलित है, और 'स्वाधीनता, 'देश', 'जाति', 'धर्म', 'वर्ग', 'शासन, 'जनअधिकार' आदि के वास्तविक रूप और उनकी यथार्थ सीमाए अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियो के अनुसार रोज-रोज निर्धारित और नियोजित होती है, और इस घनीभूत विषमता के विरोध मे सभी देशो के दलित और अपहृत वर्ग सगठित मोर्चा बनाने लगे है, ऐसे समय मे- हमे क्या कुछ आवश्यकता नही है अपनी स्वस्थ परम्पराओ को उनके सच्चे रूप मे समझने की, उनसे शक्ति, स्वास्थ्य और प्रेरणा लेने की, अपने भविष्य निर्माण मे उनसे आवश्यक सहायता और योग प्राप्त करने की?"[10]

लेकिन शमशेर जी का यह उत्साह बहुत समय तक नही रहता। आजादी मिलते ही उनको लगता है कि जिस आजादी की कल्पना उन्होने की थी वह कुछ और थी। यह तो झूठ है। उनकी पूरी पीढ़ी का तेजी से मोहभग होता है। आजादी मिलने के एक वर्ष बाद ही अपने एक लेख मे वे लगभग नास्टैल्जिक होकर स्वातंत्र्य आन्दोलन के जोश और आकांक्षाओ को याद करते हैं "उस खिलाफत वाले पहले सत्याग्रह आन्दोलन में हमारे इतिहास और संस्कृति की सभी

धाराए मिलकर एक प्रचण्ड शक्ति का वेग बन गयी थी। मगर वाह, उस अपराजेयता की बधी हुई मुट्ठी को साम्राज्यवाद की बेमिसाल कूटनीति ने किस तरह मसल-मसलकर धीरे-धीरे ढीला किया है- तब से आज तक का इतिहास यही है- उसको आज नेताओ की जख्मी ऊँगलियो की दु खती नसे और जोड-बन्द ही जानते है- कलाई से पजा जैसे अलग हो गया है, और ऊँगलिया आपस मे नही मिलती। सब शक्तिया अलग-अलग, और कैसी अलग-अलग।"[11]

सामाजिक शक्तियो के बिखराव का नतीजा यह है कि "हर तरफ ऊपरी तबका नीचे वालो की गर्दन पर सवार है, और अपने पूजी के हित उस पर ढोकर, उसे पसलियो के बल चलाना चाहता है। हुकूमत, व्यापार, नौकरी और धधा सब पर दॉव लगा हुआ है। बाहर वालो का भी और घरवालो का भी। बल्कि मिलकर।"[12]

इस अराजक स्थिति का शमशेर पर भी प्रभाव पड़ता है। स्वप्न जब यथार्थ से दो-चार होता है तो आदर्शों का महल ताश के पत्तो की तरह बिखर जाता है। एक अजीब सी जड़ता पूरे समाज मे घर कर लेती है। शमशेर का कवि इससे प्रभावित होता है। लगभग यही दौर है जब उनकी कविता मे अतियथार्थवाद का प्रभाव आना शुरु होता है। राजेश जोशी ने सही लक्षित किया है "सुर्रियलिज्म का यह अदाज उनकी प्रारम्भिक कविताओ मे लगभग नही है। यह प्रभाव 45 के आसपास शुरु होता है और आजादी के बाद, नेहरू युग मे कुछ गाढ़ा होता दिखता है। क्या आजादी के बाद के एक अनगढ़ अराजक दौर ने इसे पैदा किया है? उस सामाजिक, राजनीतिक उथल-पुथल ने, जिसमें एक ओर तेलगाना है और दूसरी ओर देश का विभाजन।

जिसमे स्वप्न और यथार्थ एक-दूसरे की ओर पीठ किए खडे है लेकिन फिर भी एक-दूसरे मे गलबहियॉ डालने को उत्सुक भी है। सामाजिक स्वप्न की नेहरूवादी अवधारणाएँ है। नेहरू और कम्युनिस्टो के बीच समर्थन और विरोध का एक अजीब सा द्वैत बन रहा है। एक मोहक बूर्ज्वा स्वाग। इस द्वैत की सबसे जटिल अभिव्यक्ति शमशेर और मुक्तिबोध मे ही दिखाई देती है। लेकिन शमशेर इस जटिल स्थिति से दो-चार होने के लिए मुक्तिबोध की तरह अत्यधिक बौद्धिकता का रास्ता नही चुनते। अतियथार्थवाद भी इस अत्यधिक बौद्धिकता का विरोध करता है। लेकिन शमशेर को अतियथार्थवादियो का जीवन का एकान्त काल्पनिक पक्ष ही प्रिय नही है। वे पॉल एलुआर और लुई आरॉगा की तरह राजनीतिक और सामाजिक स्थितियो से दो-चार होना चाहते है।''[13]

इन सामाजिक और राजनीतिक स्थितियो से दो-चार होने के लिए शमशेर के पास विचारधारा का आधार है। यह विचारधारा ही है जो उनको 'मार्बिड' तथा 'रूग्ण' मन स्थिति से उबारती है। इस सदर्भ मे भी उनके आदर्श उनके प्रिय कवि लुई अरॉगा तथा पॉल वेलरी हैं। मार्क्सवाद की इस वैचारिक पृष्ठभूमि के कारण ही उन्हे "सामाजिक एव राजनीतिक प्रसगो मे अपनी जीवनदृष्टि के प्रति किसी तरह का संकोच या सदेह नही है।''[14]

**सन्दर्भ**


1 पलाश-वन, दोआब, कुछ गद्य रचनाएं, पृष्ठ 71

2. कैफी आजमी का कवि व्यक्तित्व, कुछ और गद्य रचनाएं, पृष्ठ 123

3. अमूर्त कला, कुछ और गद्य रचनाएं, पृष्ठ 165

4 'मुसद्दस' और 'भारत भारती' की सास्कृतिक भूमिका, दोआब, कुछ गद्य रचनाए, पृष्ठ 32

5 वही, पृष्ठ 29

6 वही, पृष्ठ 35

7 वही, पृष्ठ 37

8 वही पृष्ठ 35

9 वही

10 वही, पृष्ठ 40

11 राष्ट्रीय बसन्त की प्रथम कोकिला, दोआब, कुछ गद्य रचनाए, पृष्ठ 43

12 वही

13 शमशेर का कवि व्यक्तित्व राजेश जोशी, जनवरी- जून 1995, पल-प्रतिपल, पृष्ठ 122

14 वही, पृष्ठ 125

घ. काव्य और विचारधारा के रिश्ते- शमशेर की नजर मे :

"इसका सीधा-साधा मतलब हुआ अपने चारो तरफ की जिन्दगी मे दिलचस्पी लेना, उसको ठीक-ठीक यानी वैज्ञानिक आधार पर (मेरे नजदीक यह वैज्ञानिक आधार मार्क्सवाद है) समझना और अनुभूति और अपने अनुभव को इसी समझ और जानकारी से सुलझा कर स्पष्ट करके, पुष्ट करके अपनी कला-भावना को जगाना। यह आधार इस युग के हर सच्चे और ईमानदार कलाकार के लिए बेहद जरूरी है। इस तरह अपनी कला-चेतना को जगाना और उसकी मदद से जीवन की सच्चाई और सौन्दर्य को अपनी कला मे सजीव से सजीव रूप देते जाना इसीको मै 'साधना" समझता हूँ और इसी मे कलाकार का सघर्ष छिपा हुआ देखता हूँ। कला मे भावनाओ की तराश-खराशव चमक-तेजी और गरमी सब उसी से पैदा होगी। उसी 'सघर्ष' और 'साधना' से जिसमे अन्तर-बाहर दोनो का मेल है।"[1]

विचारधारा को शमशेर किसी कलाकार के लिए अपने परिवेश तथा अपने अनुभवो को समझने का वैज्ञानिक आधार मानते है। इससे रचनाकार की दृष्टि मे निखार आता है और वह अपने समय को ज्यादा गहराई से समझकर उसका विश्लेषण करने की योग्यता पा जाता है। रचनाकार की सफलता इसी मे है कि वह विचारधारा का अपनी अभिव्यक्ति को सजीव तथा मार्मिक बनाने मे कितना उपयोग कर ले जाता है। इसी मे वे कलाकार का संघर्ष देखते हैं। उनके इसी विश्वास की अभिव्यक्ति 'दूसरा सप्तक' में प्रकाशित उनके परिचय मे हुई है "सन 45 मे नया साहित्य के सम्पादन के सिलसिले मे बम्बई गया। वहा कम्युनिस्ट पार्टी के सगठित जीवन में, अपने मन में अस्पष्ट से बने हुए सामाजिक आदर्शों का मैंने एक बहुत सुन्दर सजीव रूप

देखा। मेरी काव्य प्रतिभा ने उससे काफी लाभ उठाया।"[2] शमशेर विचारधारा को रचनाकार के विकास के लिए आवश्यक मानते हैं। वे जानते है कि आधुनिक युग की आपाधापी मे कविता सिर्फ भावो के सहारे अपनी अभिव्यक्ति मे समर्थ नही हो सकती। मुक्तिबोध उन्हे इसीलिए प्रिय है कि "उनके अन्दर 'मस्तिष्कहीन कोरी भावुकता' (माइडलेस फीलिग) नही है। उनके भावो के ज्वार के पीछे विचारो का दीर्घ दोहन है।"[3]

शमशेर सिर्फ विचार पर ही नही कवि की भावना की सच्चाई पर भी जोर देते है। उनके अनुसार "सबसे बडा यथार्थ वह है- जो हमारे अन्दर है- जो शब्दो मे नही रखा जा सकता। शब्दो मे कभी-कभी क्या, बल्कि अक्सर, उसका उपहास-सा हो जाता है। शब्दों मे आकर वह बदल जाता, गलत-सा हो जाता, और अपना पूरा मतलब खो देता है। वह यथार्थ सिर्फ इशारो मे व्यक्त होता है।"[4]

यानि कि अन्दर और बाहर के मेल से ही सच्ची अभिव्यक्ति संभव है। यथार्थ की प्रामाणिकता इस सतुलन से ही सभव है। शमशेर का मानना है कि "कोई कलाकृति किसी अनुभूति को कितनी सच्चाई और सफलता से व्यक्त करती है इस पर उसका मूल्य है।"[5] शमशेर की ऐसी ही मान्याओ से प्रेरित होकर श्री विजयदेव नारायण साही यह निष्कर्ष निकालने की जल्दीबाजी करते हैं कि मार्क्सवाद शमशेर की कविता के हाशिए पर है। पर यह निष्कर्ष सही नही है। अपनी प्रारम्भिक कविताओं के संग्रह 'उदिता' की भूमिका मे उन्होंने स्पष्ट लिखा है "यानी, जो हिन्दी कविता में छायावाद के बाद आने वाला नरेन्द्र और बच्चन के 'अभाव' और सोशल घुटन; और एक हद तक पलायन के अलावा जिन्दगी का कुछ जियादा टूटा फूटापन

और उखडा हुआ बहाव सा लिए हुए है। उस बिचले तबके की जिन्दगी के भॅवर- खामोश, तेज होते हुए भॅवर के चक्कर इस और ऐसी कविता मे मिलेगे जिससे निकलने के लिए एक तिनके का सहारा सिर्फ सोशलिज्म ही आड़े आया। जी, वही प्रगतिवाद का आन्दोलन। जो कि दरअसल आज की जिन्दगी की सच्ची परख का आन्दोलन है, कला को जिन्दगी की गहरी नीवो पर ऊपर उठाने का आन्दोलन है। वह गहरी नीवे मार्क्सवाद के विज्ञान की हैं। (वह चीज जो कि वास्तव मे मेरी कविता मे आते-आते भी नही आ पायी है)।"[6]

शमशेर जिन्दगी की सच्ची परख का आन्दोलन प्रगतिशील आन्दोलन को मानते हैं जिसकी नीवे मार्क्सवाद के विज्ञान की है। वह मार्क्सवाद जो उनकी कविता मे आते-आते भी नही आ पाया। 'उदिता' की भूमिका मे ही अन्यत्र उन्होने स्वीकार किया है कि "मैं इन मेहनतकशो का कवि वस्तुत बन नही सका। अपने वर्ग के सस्कारो का दोष।"[7] किन्तु यह शमशेर की विनम्रता है। अपनी कविता के बारे मे उनकी इस भावना के पीछे तत्कालीन प्रगतिशील आन्दोलन की कुछ प्रवृत्तियो का भी हाथ हो सकता है। उन प्रवृत्तियो का जो कविता के प्रति यात्रिक दृष्टिकोण से पनपती हैं। किन्तु शमशेर प्रतिबद्धता की इस यात्रिक परिभाषा की परिणतियो को समझ रहे थे। वे जीवन को उसकी समग्रता मे देखना चाहते हैं। 'अमूर्त कला' जैसे विषय पर लिखते हुए उन्होने कहा भी था "अपने आप मे जीवन ही है, अगर कुछ है तो।"[8] शमशेर जानते हैं कि "काव्य वस्तु की वास्तविकता-ठोसपन, ठसपन नहीं- चाहे फिर वह वास्तविकता कितनी ही छोटी हो- मगर वास्तविकता जो कि दूसरे के दिल की मुट्ठी मे कुछ-कुछ आ जाती हो (....जाहिर है कि वह जीवन में आधारों की नैतिकता का कोई पहलू है.... जिसकी टेक-सी

कवि जाने-अनजाने तौर से अपने पाठक को देता है ।"[9]

यह जीवन मे 'आधारो की नैतिकता का कोई पहलू' वस्तुत मार्क्सवाद है। इसीलिए शमशेर को मुक्तिबोध प्रिय कवि लगते है क्योकि" वह युग के उस चेहरे की तलाश करते है जो आज के इतिहास के मलबे के नीचे दब गया है, अगर मरा नही है। जिन अनुभूतियो को इस कड़ियल कवि ने झेला है उनमे लगातार जीकर, उनकी अग्निपरीक्षा देकर वह आ खड़ा हुआ है जहा वह प्रत्येक सघर्षशील देश और जनता का अपना हो गया है।"[10]

मुक्तिबोध को यह व्यापक स्वीकृति इसलिए मिली क्योकि उनमे दृष्टि की सकीर्णता नही है। मुक्तिबोध पर लिखे अपने लेख मे शमशेर लिखते है "मुक्तिबोध ने छायावाद की सीमाए लाघकर प्रगतिवाद से मार्क्सी दर्शन ले, प्रयोगवाद के अधिकांश हथियार सभाल और उसकी स्वतत्रता महसूस कर, स्वतत्र कवि- रूप से, सब वादो और पार्टियो से ऊपर उठकर, निराला की सुथरी और खुली मानवतावादी परम्परा को बहुत आगे बढ़ाया।"[11] उन निराला की परम्परा को आगे बढ़ाया जो शमशेर के लिए सघनतम की आँख हैं। वे जब भी भटकते हैं तो निराला ही रास्ता सुझाते हैं। कहने का मतलब है कि शमशेर मे प्रतिबद्धता की कोई यांत्रिक अवधारणा नही है। वे समाज के साथ रचनाकार की क्रिया-प्रतिक्रिया (Interaction) मे ही विचारधारा की पुष्टि तथा उसका विकास देखते हैं। अपनी उदारता मे वे यहां तक कहते हैं कि "पूरी राजनीतिक स्थिति का यथार्थ सभी राजनीतिक विचारों और हलचलो के सापेक्ष अध्ययन द्वारा ही स्पष्ट हो सकता है और जो साहित्यकार, कलाकार द्वन्द्वात्मक ऐतिहासिक दृष्टि से इस श्रम के लिए तत्पर होगा,

वही अपनी कला के यथार्थ सदर्भो तक पहुच सकेगा। मेरे विचार से इसके लिए किसी दल या पार्टी से 'कमिटेड' होना जरूरी और लाजिमी नही। किसी भी प्रकारक ी निष्ठापूर्ण सामाजिक कार्यशीलता साहित्यकार, कलाकार के लिए हमेशा बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।"[12] अब शमशेर की इस उदारता और व्यापक दृष्टिकोण से अगर यह निष्कर्ष निकाला जाय कि प्रगतिवाद उनकी कविता के हाशिए पर है तो यह उनके साथा ज्यादती नही तो और क्या है?

मलयज से अपनी बातचीत मे शमशेर ने स्पष्ट स्वीकार किया है "मार्क्सवाद और मेरे आदर्शवाद मे कम से कम मेरे लिए कोई विरोधाभास नही रहा, मार्क्सवाद मेरे तई मेरे उस आदर्शवाद का एक जुज था, कोई सिद्धान्तवादिता नही, वह मेरी एक रुहानी जरूरत की पूर्ति करता था। मार्क्सवाद मेरी जरूरत थी, सच्ची जरूरत, उसने मुझे मार्बिड और रूग्ण मन स्थिति से, जिसमे कि मुझे डर था कि पड़ा रहकर मै बिल्कुल ही डूब जाऊँगा, सपाट हो जाऊँगा, मुझे उबारा। मार्क्सवाद का जनवादी रूप, उसकी जनवादी आकाक्षा हमेशा मुझे आकर्षित करती रही- बुनियादी तौर पर मुझे हर वह चीज आकर्षित करती है जो मुझसे, मेरी प्रकृतिसे भिन्न हो; क्योकि मुझे लगता है कि इस तरह मेरी अपनी कोई कमी पूरी हो रही है उस दूसरे मे . मैं जो नहीं हूॅ और जो होना चाहता हूॅ, इसके संघर्ष मे पड़ने और उस संघर्ष का सब जोखिम उठाने के सिवाय मेरे पास एकमात्र रास्ता था कि मैं अपने रुग्ण और मार्बिड एहसासो के अधे कुएं मे हमेशा के लिए गिर जाऊँ.. . .इसीलिए मैं कहता हूँ मार्क्सवाद और मेरे आदर्शवादी स्वभाव में कोई अन्तर्विरोध नही।"[13]

सदर्भ :


1 वक्तव्य, दूसरा सप्तक, पृष्ठ 87

2 परिचय, दूसरा सप्तक, पृष्ठ 84

3 एक विलक्षण प्रतिभा, कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 187

4 अमूर्त कला, कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 166

5 वही, पृष्ठ 167

6 सीधे अपने पाठक से, भूमिका, उदिता- अभिव्यक्ति का सघर्ष पृष्ठ 105

7 वही

8 अमूर्त कला, कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 166

9 डायरी, जनवरी 52, कुछ गद्य रचनाएं, पृष्ठ 272

10 जीवन जो हारा नही खत्म हो गया, कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 143

11 एक विलक्षण प्रतिभा कुछ और गद्य रचनाएं, पृष्ठ 190

12. नामवर, कुछ और गद्य रचनाएं, पृष्ठ 152

13. बात बोलेगी, पर कब ? मलयज, सापेक्ष, शमशेर अंक, पृ. 46

## ङ. सौन्दर्य दृष्टि और कलात्मक अनुशासन

"कविता के माध्यम से मैने प्यार करना, अधिक से अधिक चीजो को प्यार करना सीखा है। मै उसके द्वारा सौदर्य तक पहुँचा हूँ। मेरी चेतना इतनी, कह लो कडीशड हो चुकी है, कि हर चीज मे मुझे एक अत सौन्दर्य दिखाई देता है, बिना किसी अतिरिक्त काशस प्रयत्न के, सौदर्य का पूरा एक कम्पोजीशन दृश्य जगत पहले मेरी नजर मे सौदर्य के एक कम्पोजीशन के रूप मे ही आता है।"[1]

वस्तुजगत मे सौन्दर्य की यह अनायास अनुभूति शमशेर के काव्य की अद्‌भुत खासियत है। उनका सौदर्यबोध इतना व्यापक और परिष्कृत है कि उनकी कविताए चीजो के देखने की हमारी दृष्टि मे गहरा परिवर्तन उपस्थित कर देती है। वे दृश्य जगत को एक खास कोण से देखने की अपेक्षा हमसे करती है अन्यथा उनका अत सौन्दर्य हमसे ओझल हो जाता है। दृश्य जगत को सौदर्य के एक कम्पोजीशन के रूप मे देखने की इस कला प्रतिभा के कारण ही उन्हे लगता है कि "तस्वीर, इमारत, मूर्ति, नाच, गाना और कविता- इन सबमे बहुत कुछ एक ही बात अपने-अपने ढग से खोलकर या छिपाकर या कुछ खोलकर कुछ छिपाकर कही जाती है। मगर इनके ये अलग-अलग ढंग दरअसल एक-दूसरे से ऐसे अलग-अलग नही हैं, जैसे कि ऊपरी तौर पर लगते हैं।"[2] शमशेर अपनी कविताओं में इस 'कुछ खोल कर कुछ छिपाकर' कहने की कला का बखूबी प्रयोग करते हैं। दृश्य जगत का यह अंत सौंदर्य भले ही उन्हे सौन्दर्य के एक 'कम्पोजीशन' के रूप मे दिखाई देता हो किन्तु वे हमे इस सौन्दर्य को 'दिखाना' नहीं 'अनुभूत' कराना चाहते हैं। उनकी कविताएं हमसे मांग करती हैं कि इस सौंनदर्य का पान करने के लिए हम उनकी

अन्तरात्मा मे प्रवेश करे। किन्तु यह काम उतना आसान नही है। बकौल मुक्तिबोध "शमशेर की आत्म ने अपनी अभिव्यक्ति का एक प्रभावशाली भवन अपने हाथो तैयार किया है। उस भवन मे जाने से डर लगता है- उसकी गम्भीर प्रयत्नसाध्य पवित्रता के कारण।"[3]

इसीलिए हमे खुद को अभिव्यक्ति के उस प्रभावशाली भवन मे प्रवेश से पहले खुद को तैयार करना पड़ता है। उस सौदर्य को शमशेर की दृष्टि से देखने की आदत बनानी पड़ती है। सौन्दर्य की आडी-तिरछी रेखाओ मे रग भरने के लिए अपनी कल्पना के घोडे दौड़ाने होते है। उन वास्तविक भावप्रसगो की उद्‌भावना करनी होती है जो कि उन कविताओ की अभिव्यक्ति के मूल मे रहे होगे और जिनके बारे मे शमशेर हमे साफ-साफ कुछ नही बताते, सिर्फ एक इशारा करते है- एक हल्का सा इशारा बस।

एक सोने की घाटी जैसे उड़ चली

जब तूने अपने हाथ उठाकर

मुझे देखा

एक कमल सहस्रदली होठो से

दिशाओ को छूने लगा

जब तूने आँख-भर मुझे देखा।

न जाने किसने मुझे अतुलित

छवि के भयानक अतल से

निकाला..... जब तू, बाल लहराए,

मेरे सम्मुख खड़ी थी   मुझे नही ज्ञात।

सच बताना, क्या तू ही तो नही थी?

तूने मुझे दूरियो से बढ़कर

एक अहिर्निश गोद बनकर

लपेट लिया है,

इतनी विशाल व्यापक तू होगी,

सच कहता हूॅं, मुझे स्वप्न मे भी

गुमान न था।

हॉ, तेरी हॅसी को मै उषा की भाप से निर्मित

गुलाब की बिवखरती पखुड़ियॉ ही समझता था

मगर वह मेरा हृदय भी कभी छील डालेगी,

मुझे मालूम न था।

तेरी निर्दयता ही शायद दया हो,

दोनो की एकप्राणता ही शायद

तेरा अजानपन और

तेरा सौंदर्य है।[4]

इस कविता का शीर्षक सौन्दर्य है। यहाँ बात स्त्री और पुरुष के बीच प्रेम और मिलन की है, स्त्री के शरीर की है। लेकिन सिर्फ इतना ही नही  हैं। शमशेर यहाँ वास्तविक भाव प्रसंगों को उठाकर 'कॉसमिक' बिम्बों का निर्माण कर देते हैं और अनुभव का पूरा वितान सौन्दर्य की

अलौकिक अनुभूति मे बदल जाता है। यहॉ प्रेम सिर्फ प्रेम नही रह जाता बल्कि विशुद्ध ऐन्द्रिक अनुभव मे बदल जाता है अपने पूरे अध्यात्म के साथ। यह अध्यात्म 'अजानपन' का है जो सौन्दर्य का पर्यायवाची है। इस 'अजानपन' ने 'अहर्निश' गोद बनकर कवि को लपेट लिया है। यह इतना 'विशाल' और 'व्यापक' है कि लगता है 'एक कमल सहस्रदली होटो से दिशाओ को छूने लगा है।'' यहॉ अतुलित छवि का भयानक अतल है।' शायद 'निर्दयता' ही 'दया' है। दोनो एकप्राण है।

जीवन की तुला मे

प्राणो का सयमन।[5]

डॉ विजयदेव नारायण साही सही कहते है कि ''तात्विक रूप मे शमशेर की काव्यानुभूति सौन्दर्य की ही अनुभूति है।''[6] और शमशेर के यहॉ 'काव्यानुभूति और जीवनानुभूति एक ही वस्तु है।''[7] शमशेर की समस्या इनके सतुलन की है। उनकी महत्वाकाक्षा सौंदर्यानुभूति मे वस्तुनिष्ठता प्राप्त करने की है। अपनी कविताओ मे वे इस वस्तुनिष्ठता को साधने की भरसक कोशिश करते दिखाई पड़ते है। वे जानते हैं ''सुन्दरता का अवतार हमारे सामने पल-छिन होता रहता है। अब यह हम पर है, खास तौर से कवियो पर, कि हम अपने सामने और चारों ओर की इस अनन्त और अपार लीला को कितना अपने अन्दर घुला सकते हैं।''[8]

शमशेर ने इस 'अपार' और 'अनन्त' लीला को उसके सारे रहस्यों के साथ अपने अंदर घुलाया है। इसीलिए इस 'अपार' और 'अनन्त' सुन्दरता की अभिव्यक्ति वे इतने संक्षिप्त कि कहीं-कहीं मौन और कम से कम शब्दों में कर पाये हैं। उनकी कला साधना सौन्दर्य साधना है।

इस सौदर्य साधना मे उन्होने जो दृष्टि और क्षमता उपार्जित की है वह उनकी बिल्कुल निजी चीज है। इसीलिए मुक्तिबोध कहते है कि "शमशेर नि सन्देह, एक अद्वितीय कवि है।"[9] क्योकि उन्होने जो 'अभिव्यक्ति-शिल्प' अर्जित की है वह हिन्दी साहित्य को उनकी 'अनूठी देन' है।

शमशेर पहले चित्रकार बनना चाहते थे। उन्होने बाकायदा इसका प्रशिक्षण भी लिया था। वे फ्रास के कला आन्दोलनो से भी प्रभावित थे। उनके भीतर बैठे चित्रकार ने उनकी कविता पर बहुत गहरा रग डाला है। उन्होने स्वीकार भी किया है- "पर मैंने अपनी चित्रकारी के शौक को कविता मे काफी पूरा किया मैने चीजो को अक्सर पेटिंग की शक्ल मे ग्रहण किया है, भले ही उनका कोई बाह्य रूपाकार न हो रग न हो, पर रगो के प्रभाव उनमे है- रगो के भावात्मक रूप।"[10] शमशेर ने अपनी कविताओ मे रगो के भावात्मक रूप को पकड़ने की कोशिश की है। जैसे एक चित्रकार केवल कुछ ही ब्रश स्ट्रोक्स से एक दृश्य को उपस्थित कर देता है उसी तरह शमशेर भी अपनी कविता मे शब्दो की मितव्ययिता से, केवल कुछ बिम्बो से ही हमारे सामने दृश्य को मूर्त कर देते हैं-

सूना-सूना पथ है, उदास झरना

एक धुधली बादल-रेखा पर टिका हुआ आसमान

जहॉ वह काली युवती

हॅसी थी।[11]

शमशेर की इसी विशेषता को लक्ष्य करके मुक्तिबोध ने लिखा था "शमशेर की मूल मनोवृत्ति एक इम्प्रेशनिस्टिक चित्रकार की है। इम्प्रेशनिस्टिक चित्रकार अपने चित्र में केवल उन

अशो को स्थान देगा जो उसके सवेदना-ज्ञान की दृष्टि से, प्रभावपूर्ण सकेतशक्ति रखते है। वह दृश्य चित्र मे उन्ही अशो को स्थान देता है कि जो उसके सवेदनाज्ञान की दृष्टि से उस दृश्य के अत्यन्त महत्वपूर्ण, अत प्रगाढ़, प्रभावपूर्ण अग है। केवल कुछ ही ब्रशेज मे वह अपना काम करके, दृश्य के शेष अशो को दर्शक की कल्पना के भरोसे छोड देता है। दूसरे शब्दो मे, इम्प्रेशनिस्ट चित्रकार, दृश्य के सर्वाधिक सवेदनाघात करने वाले अशो को प्रस्तुत करेगा और यह मानकर चलेगा कि यदि यह सवेदना-घात दर्शक के हृदय मे पहुँच गया तो दर्शक अचित्रित शेष अशो को अपनी सृजनशील कल्पना द्वारा भर लेगा।''[12]

शमशेर चित्रकला की इस टेकनीक का इस्तेमाल अपनी कविताओ मे अक्सर करते है। वे शब्दो के माध्यम से एक बिम्ब चित्र का निर्माण करते हैं। अपने आस-पास तथा प्रकृति का बहुत ही गहरा एव सूक्ष्म पर्यवेक्षण इसमे उनकी मदद करता है। उनकी कविता मे ''एक दरिया उमड़कर पीले गुलाबो का चूमता है बादलो के झिलमिलाते स्वप्न जैसे पाव। वहॉ 'मौन मे बुझी तलवार' है तो सुरमई गहराइयॉ' भी है 'भाव मे स्थिर।' शमशेर के लिए सौंदर्य ऐसा है जैसे 'अधकार के चमकीले निर्झर मे; तुम्हारे स्वर चमकते हैं।' 'खून बजता है हवा मे'' और वहॉ है 'धुॅधली बादल रेखा पर टिका हुआ आसमान।'

'सौन्दर्य' शीर्षक से ही शमशेर की एक अन्य कविता के कुछ अंश यहाँ उद्धृत हैं-

एक अधकार के चमकीले निर्झर मे

तुम्हारे स्वर चमकते हैं

एक इतजार के झुरमुट मे

वह फल है

जिसका अतर एक तीखी पुकार है

उस आकाश मे तुम्हारी गूँज

कि जैसे खून बजता हो हवा मे

कि जैसे मुक्त जीवन का प्रवाह बजता हो

सौदर्य जो त्वचा मे नही

थिरकते रक्त मे नही

मस्तिष्क मे नही

नही

कही इनके पार से

बरसता है अणु-अणु पल-पल मे

बदन मे, दृष्टि मे-

शब्द मे   और उनके पार से

कही शब्द के अर्थ मे

दु:ख-सा मौन-सा

अपरमित सुख की चेतना मे

भधता है

मथता है।

ओ स्पर्श।

मुझे क्षमा करना

कि तुम मुझी मे होकर मुझी से परे हो।

ओ माध्यम!

क्षमा करना

कि मै तुम्हारे पार जाना चाहता रहा हूँ।

शमशेर के यहॉ ऐन्द्रिक अनुभवो का एक अजीब सा घालमेल है। वहॉ आखे सुनती है, कान देखते है। उनके यहॉ उस आकाश मे तुम्हारी गूज कि जैसे खून बजता हो हवा मे।' और 'अधकार के चमकीले निर्झर मे' चमकते' हुए 'स्वर' है। इस घालमेल से एक अलग तरह का सगीत बनता है जो कविताओ मे एक अलग तरह का रग भरता है। शमशेर जानते हैं कि 'सौन्दर्य जो त्वचा मे नही' है और 'थिरकते रक्त मे नही', वह 'कही' इन सबके पार से बरसता है अणु-अणु पल-पल मे। सौन्दर्य 'शब्द मे   और उनके पार से कही शब्द के अर्थ मे' बरसता है 'दु ख-सा-मौन-सा'। इसी 'पल-पल' बरसते सौदर्य का पान शमशेर का साध्य है। लेकिन उन्हे अपनी सीमाओ का भी ज्ञान है। उन्हे अपने क्षितिज की अनंतता का भी ज्ञान है। इसलिए उनमे 'स्पर्श' उनमे होकर भी उनसे 'परे' है। इसीलिये वे हमेशा 'माध्यम' के 'पार' जाना चाहते रहे है। उनकी कविता माध्यमो के खोज की भी कविता है। नित नये प्रयोग उनका स्वभाव है। कलात्मकता के अतिरिक्त आग्रह की वजह से ऐसा नहीं बल्कि कवि की अपनी आंतरिक माग के कारण ऐसा है। इसीलिए उनकी कला इतनी जीवत और प्रकृत है। कुछ भी थोपा हुआ नही है।

आधुनिक हिन्दी कविता मे विभिन्न कला अनुशासनो की गहरी समझ का सर्वाधिक उपयोग यदि किसी कवि ने अपनी कविता मे किया है तो वह शमशेर हैं। चित्रमयता तो जैसे उनकी कविताओं का प्राण है। क्योकि मुक्तिबोध के शब्दों में "शमशेर ने अपने हृदय में आसीन चित्रकार को पदच्युत कर, कवि को अधिष्ठित किया है।"[14] लेकिन शमशेर ने इसमें बहुत कुछ

अपने कवि का भी जोड़ा है। शमशेर ने दृश्यो के सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्वो को पहचानकर अपनी कविताओ मे उनका उपयोग किया है। केवल चित्रकार के लिए यह सभव न होता। भावनाओ के सूक्ष्म रूपो की जैसी अभिव्यक्ति उनकी कविताओ मे हुई है वह शायद सभव न हो पाती यदि शमशेर ने अपनी चित्रदृष्टि का इस्तेमाल न किया होता।

> एक नीला दरिया बरस रहा है
>
> और बहुत चौडी हवाए है
>
> मकानात है मैदान
>
> किस कदर ऊबड़-खाबड़
>
> मगर
>
> एक दरिया
>
> और हवाए
>
> मेरे सीने मे गूँज रही हैं।[15]

शमशेर की कविताओ मे रूप (फार्म) के लिए कोई अतिरिक्त प्रयत्न नही दीख पड़ता। इसका मतलब यह नही है कि वे रूप के प्रति असावधान कवि हैं। दरअसल उनकी कविताओं मे रूप और वस्तु की अलग सत्ता है ही नहीं। वे एक दूसरे में घुले-मिले हैं। ऐसा 'विलयनवादी' काव्य शमशेर ही लिख सकते थे। उनकी कविताओ को पढ़ते हुए महसूस होता है जैसे वस्तु ही ढलकर रूप बन रही हो। पूर्वी और पश्चिमी काव्यपरंपराओ को शमशेर ने आत्मसात् किया हुआ था। उनके गहरे प्रभाव शमशेर की कविता पर हैं। पर वे प्रभाव अलग से नहीं हैं बल्कि कविताओं

मे रचे-बसे हुए है। उर्दू-फारसी परपरा की गजल, मर्सिया, नज्म आदि सभी विधाओ का उपयोग शमशेर ने किया था। यहॉ तक कि उनकी छन्दमुक्त कविताए भी कभी-कभी गजल का लुत्फ देती है।

सगीत का गहन असर शमशेर की कविताओ पर है। वे अपनी कविताओ से सगीत की उदात्त भूमि पर पहुचना चाहते है। वहॉ पहुँचकर शब्द भी शब्द नही रह जाते बल्कि लय हो जाते है। उनकी कविताओ मे शब्दो के बीच तथा पक्तियो के बीच जो थोड़ा सा स्पेस है वह हमे अनत स्पेस की अनुभूति कराता है। कई बार तो शब्द भी जैसे टूट-टूट जाते है। लेकिन ऐसा होने पर भी कविता का भाव कही-से टूटता विखरता नही। वह अटूट है। अपनी शमशेरियत के रग मे डूबा हुआ। "फिर एक ही जन्म मे और क्या-व/चाहिए।"[16]

**सन्दर्भ**


1 बात बोलेगी पर कब ? मलयज से बातचीत, सापेक्ष शमशेर अक पृष्ठ 49

2 वक्तव्य, दूसरा सप्तक, पृष्ठ 7

3 शमशेर मेरी दृष्टि मे, मुक्तिबोध, शमशेर, पृष्ठ 12

4 सौन्दर्य, प्रतिनिधि कविताए पृष्ठ 147

5 पिकासोई कला, इतने पास अपने, पृष्ठ 23

6. शमशेर की काव्यानुभूति की बनावट, डॉ. विजयदेव नारायण साही, शमशेर, पृष्ठ 25

7. वही, पृष्ठ 27

8 वक्तव्य, दूसरा सप्तक, पृष्ठ 87

9 शमशेर मेरी दृष्टि मे, मुक्तिबोध, शमशेर पृष्ठ 12

10 बात बोलेगी पर कब ? मलयज से बातचीत, सापेक्ष शमशेर अक पृष्ठ 55

11 प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 20

12 शमशेर मेरी दृष्टि मे, मुक्तिबोध, शमशेर, पृष्ठ 12

13 सौदर्य, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 132

14 शमशेर मेरी दृष्टि मे, मुक्तिबोध पृष्ठ 12

15 एक नीला दरिया बरस रहा है, चुका भी हूँ नही मै, पृष्ठ 9

16 इतने पास अपने, पृष्ठ 20

# अध्याय : 3

# कला : संधान

क कला-सधान एक निरतर प्रक्रिया

ख कविता मे शब्द की सत्ता का इस्तेमाल

ग शब्दार्थ की अर्न्तध्वनियॉ और कलात्मक संधान की विभिन्न प्रक्रियायें

घ शब्दार्थ और शब्द की लयात्मकता के विभिन्न प्रयोग

ड रगो और रेखाओ की परिणतियॉ

## क कला संधान : एक निरन्तर प्रक्रिया

To Sum up aesthetic theory is the theory not of beauty but of art [1]

सौन्दर्यानुभव एक स्वायत्त प्रक्रिया है। उसकी उत्पत्ति भीतर से होती है, बाहर से नही। बाह्य जगत निरन्तर गतिमान है। उसमे सौन्दर्य देख पाने की क्षमता हमारे भीतर होनी चाहिए। यह क्षमता कलाकार को अर्जित करनी पडती है। सौन्दर्य बाह्य वस्तु मे नही बल्कि उसको देखने की हमारी दृष्टि मे है। यह दृष्टि परम्परा के पाठ से तो मिलती ही है लेकिन उसका बड़ा हिस्सा कलाकार अपनी अभिव्यक्ति के सघर्ष मे हासिल कर पाता है। परम्परा को आत्मसात् कर लेने तथा अभिव्यक्ति के इस सघर्ष ने ही शमशेर को वह दृष्टि दी है जहॉ वे कहते है "कि हर चीज मे मुझे एक अत सौन्दर्य दिखाई देता है, बिना किसी अतिरिक्त काशस प्रयत्न के, सौन्दर्य का पूरा एक कम्पोजीशन "[2] यानि कि सौन्दर्यानुभव यहॉ पूरी तरह स्वायत्त है। बाह्य वस्तुओ का तनिक भी दखल उसे मजूर नही। समस्या तब उठती है जब इस सौन्दर्यानुभव की अभिव्यक्ति का अवसर आता है। चाहे कविता हो, चाहे अन्य कोई कला माध्यम, अभिव्यक्ति के सारे औजार इस बाह्य मे हैं। यह बाह्य जगत् सौन्दर्यानुभव की उस स्वायत्ता को परिसीमित करता है। उसे पार्थिवता के धरातल पर लाता है। कलाकार की समस्या यहॉ से बढ़ जाती है क्योकि यह बाह्य सौन्दर्यानुभव की स्वायत्तता मे दखल तो देता ही है अक्सर उसे एकदम से बदल डालता है। यानि कि सौन्दर्य अनुभव के स्तर पर तो स्वायत्त है किन्तु अभिव्यक्ति के स्तर पर कलात्मक क्षमता पर निर्भर है। कलाकार का सारा संघर्ष इस कलात्मक क्षमता को हासिल कर लेने का है। अभिव्यक्ति की अभिनव कोटियो का सतत् संधान उसकी दृष्टि और क्षमता दोनों को समृद्ध

करता है। किसी भी सवेदनशील कलाकार के लिए यह निरतर चलने वाली प्रक्रिया है। मुक्तिबोध के अनुसार कला सधान की इस प्रक्रिया के तीन क्षण होते है- "कला का पहला क्षण है जीवन का उत्कट तीव्र अनुभवक्षण। दूसरा क्षण है, इस अनुभव का अपने कसकते-दुखते हुए मूलो से पृथक हो जाना और एक ऐसी फैण्टैसी का रूप धारण कर लेना मानो वह फैण्टैसी अपनी आखो के सामने ही खडी हो। तीसरा और अतिम क्षण है, उस फैण्टैसी के शब्द-बद्ध होने की प्रक्रिया का आरभ और उस प्रक्रिया की परिपूर्णावस्था तक की गतिमानता। शब्दबद्ध होने की प्रक्रिया के भीतर जो प्रवाह बहता रहता है वह समस्त व्यक्तित्व और जीवन का प्रवाह होता है। प्रवाह मे वह फैण्टैसी अनवरत रूप से विकसित परिवर्तित होती हुई आगे बढ़ती जाती है। इस प्रकार वह फैण्टैसी अपने मूल रूप का बहुत कुछ त्यागती हुई नवीन रूप धारण करती है। जिस फैण्टेसी को शब्द-बद्ध करने का प्रयत्न किया जा रहा है वह फैण्टेसी अपने मूल रूप से इतनी अधिक दूर चली जाती है कि यह कहना कठिन है कि फैण्टेसी का यह नया रूप अपने मूल रूप की प्रतिकृति है। फैण्टेसी को शब्द-बद्ध करने की प्रक्रिया के दौरान जो-जो सृजन होता है- जिसके कारण कृति क्रमश विकसित होती जाती है- वहीं कला का तीसरा और अन्तिम क्षण है। प्रथम क्षण निस्सन्देह अनुभव का क्षण है। उसके बिना आवेग और आगे की गति असम्भव है। मानसिक प्रक्रिया को आत्माभिव्यक्ति की ओर ले जाने के लिए आवश्यक पहला जबरदस्त धक्का यह प्रथम क्षण ही देता है। वह उस गति की दिशा निर्धारित करता है। साथ ही, वह उसके तत्त्व रूपायित करता है अर्थात् वह उनको एक आकार प्रदान करता है। साथ ही मजा यह है कि यह अनुभव विचित्र रूप से अन्य मनस्तत्वो से जुड़ता हुआ मनस्पटल पर स्वयं को प्रक्षेपित कर स्वय

इसका अर्थ हुआ कि सौन्दर्यानुभव का गहरा सम्बन्ध सृजन की प्रक्रिया से है। यह सृजन प्रक्रिया कलाकार की साधना पर निर्भर है। कलाकार अपनी कला साधना और कल्पनाशक्ति के सहारे अपने सवेदित अनुभवो का विस्तार करता है। शमशेर के सदर्भ मे यह कला साधना, कला का निरतर सधान है। कला का यह निरतर सधान की उनके एस्थेटिक एक्सपीरियेन्स का मर्म है। अपनी प्रत्येक अभिव्यक्ति के साथ ही उनकी यह रचनात्मक बेचैनी और गहरी होती जाती है कि कुछ रह गया जिसका मर्म पकड मे नही आया। उनकी यह रचनात्मक बेचैनी उनसे नित नए प्रयोग करवाती है। प्रयोगवाद को 'नर्वस ब्रेकडाउन' का आर्ट मानने के बावजूद शमशेर अपने कई समकालीनो की तुलना मे अधिक प्रयोगशील हैं। शायद उनका परहेज 'वाद' से है। उनकी प्रसिद्ध कविता है 'चीन देश का नाम'। इस कविता को पढ़कर डॉ विजयदेव नारायण साही ने निष्कर्ष निकाला था कि "सिर्फ कविताए सुनकर यह कल्पना करना लगभग असभव है कि पहली कविता का शीर्षक 'चीन' है और वह 'चीनी जनता का लोकसत्तात्मक गणतत्र राज्य' के चीनी अक्षरो को चित्र पहेली की तरह इस्तेमाल करके रची गयी है, और दूसरी कविता का शीर्षक 'सौन्दर्य' है। सच तो यह है कि शमशेर की सारी कविताएं यदि शीर्षक हीन छपे, या उन सबका एक ही शीर्षक हो, सौन्दर्य, शुद्ध सौंदर्य तो कोई अन्तर नही पड़ेगा।"[4]

इस निष्कर्ष को स्वीकार करने के अपने खतरे हैं। शमशेर इसको समझते थे। मलयज से बातचीत करते हुए उन्होने कहा था- "काव्य की कुछ उपलब्धियाँ निगेटिव मूल्य के रूप में होती हैं, समझ लो कि यह बरबस सौन्दर्य के एक खाके में अपने को अनायास महसूस कर लेना मेरी कविता की वही निगेटिव उपलब्धि है।"[5] शमशेर का वक्तव्य उनकी विनम्रता तो है ही किन्तु साथ

ही उनके काव्य व्यक्तित्व मे बद्धमूल उस द्वन्द्व की तरफ इशारा भी है जिसे उनकी विचारधारा ने पैदा किया है। एक तरफ दृश्यजगत को बरबस सौन्दर्य के एक खाके मे देख लेने का कलात्मक परिष्कार और दूसरी तरफ सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक अभावो और यथार्थ की जटिलताओ का भारी दबाव। शमशेर अपने तरीकेसे इस द्वन्द्व से निपटने का प्रयास करते है। डॉ रघुवश ने सही लक्ष्य किया है कि 'शमशेर की अपनी विशेषता है कि वह बड़ी सरलता से सहज ही अपनी व्यक्तिनिष्ठता के साथ सामाजिक दायित्व को समायोजित कर लेते हैं और अपनी शुद्ध कवितावादी दृष्टि के कारण दोनो स्थितियो के सामजस्य या सन्तुलन की अपेक्षा भी उन्हे नही होती । वह स्वय सारा भार प्रतिभा, शक्ति और सामर्थ्य पर डालकर श्रेष्ठ काव्य की दुहाई देते हुए अलग हो जाते है। . उनमे 'समाज-सत्य के मर्म को ढालना', 'सामाजिक दायित्व के पक्ष मे उत्कृष्ट रहेटारिक या महान छन्दोबद्ध जोशीली पत्रकारिता को श्रेष्ठ काव्य का रूप मानना', 'कविता में सामाजिक अनुभूति को काव्य पक्ष मे ही महत्वपूर्ण स्वीकारना' और फिर अपनी गजलों के समर्थन मे अपनी असाधारणता के दावे को पेश न करने की विनम्रता- सब एक साथ उपस्थित होकर आकर्षक हो उठे है। वास्तव मे यह शुद्ध कवि-दृष्टि का ऐन्द्रजालिक प्रभाव है, जो हमको अभिभूत करती है।"[6]

कव्रि दृष्टि का यह ऐन्द्रजालिक प्रभाव उस सौन्दर्यचेतना का परिणाम है जहाँ शमशेर "कह सकते है कि एक चित्रकार तान लेता है, एक गायक चित्रण करता है, एक कवि मूर्ति और मंदिर बनाता है।"[7] अन्यान्य कलामाध्यमों का सृजनात्मक इस्तेमाल शमशेर की कला साधना को अधिक समृद्ध बनाता है। उनकी प्रयोगशील सौन्दर्य चेतना इनसे लाभ उठाकर अपनी

अभिव्यक्ति को और भी अधिक सक्षम बनाती है। शमशेर की कविता है 'एक मुद्रा से'-

सुन्दर !

उठाओ

निज वक्ष

और-कस-उभर।

क्यारी

भरी गेंदा की

स्वर्णारक्त

क्यारी भरी गेदा की

तन पर

खिली सारी-

अति सुन्दर। उठाओ ।

स्वप्न-जड़ित-मुद्रामयि

शिथिल करुण।

हरो मोह-ताप, समुद

स्मर-उर वर

हरो मोह-ताप-

और और कस उभर।

सुन्दर । उठाओ।[8]

नारी सौन्दर्य का जो स्थापत्य भारतीय परम्परा मे मिलता है उसका सुन्दर दर्शन इस कविता मे हम करते हैं। यहाँ कविता अनुभव करने की नहीं वरन् देखने की वस्तु बन गयी है। शब्दो के माध्यम से सौन्दर्य का चाक्षुष पान। यह क्षमता किसी मामूली कलाकार के बूते की बात

नही होती। शमशेर ने यह क्षमता निरन्तर कला सधान से अर्जित किया है। 'रेडियो पर योरोपीय सगीत सुनकर या 'पिकासोई कला' ऐसी अन्य कविताए है जहॉ कवि के साथ हम भी योरोपीय सगीत के तरन्नुम से- डूब जाते है, या 'जीवन की तुला मे प्राणो का सयमन' जैसी पिकासोई कला का अपरोक्ष साक्षात्कार करते हैं।

शमशेर ने कला माध्यमो के साथ-साथ भाषा और शैली के स्तर पर भी नये सधान किये है। हिन्दी, उर्दू काव्य की विभिन्न शैलियो से लेकर अग्रेजी के मुक्तक, सानेट आदि छन्दो का भी उन्होने बराबर व्यवहार किया है। कोई भी माध्यम जहॉ नवीनता या मौलिकता दीखी हो उन्हे अपनी तरफ खीचती हैं। 'मणिपुरी काव्य साहित्य की एक विहगम नन्ही सी झाकी' कविता बकौल शमशेर "कुछ नितान्त अजनबी किन्तु आकर्षक शब्दो के मात्र उच्चारण- सुख के लिए ये मुक्तपद लिखे गये।"[9]

कला सधान शमशेर के लिए निरतर चलने वाली प्रक्रिया है। उनके यहॉ सौन्दर्यानुभव सृजन प्रक्रिया से अनिवार्य रूप से सम्बद्ध है। इस सौन्दर्यानुभव को अभिव्यक्त करने के लिए अपनी सृजन प्रक्रिया मे कवि नित् नये माध्यमो की खोज करता है। उसकी यह खोज हमेशा अधूरी रहती है। ऐसा होने के लिए कलाकार अभिशप्त होता है। उस अधूरे या न कुछ को पाने का वह फिर-फिर प्रयत्न करता है। अपने इस आतरिक अभाव और बेचैनी की पूर्ति वह कला के निरतर संधान से करता है। टी. एस. इलियट की पक्तिया हैं :-

Because I cannot dnnk

There where trees, flowers and sprıngs flood,

for there ıs nothıng agaın,

Becuse I cannot hope to turn agaın,

Consequently I rejoice, havın I to construct

somethıng upon whıch to rejoice [10]

यहॉ निर्माण या सृजन इसलिए है कि उसके आधार पर आनन्दित हुआ जा सके। क्योकि कुछ भी दुबारा नही होता। क्योकि कवि दुबारा लौटने की आशा नही करता। शमशेर भी कहते है- "पर मै तो जैसे इसी शरीर से अमर हूँ"। यह कला के सौन्दर्य क्षण की अमरता है जहॉ दुबारा जन्म नही होता। इसीलिए शमशेर लिखते हैं-

लौट आ ओ धार

टूट मत ओ सॉझ के पत्थर

हृदय पर

(मै समय की एक लंबी आह

मौन लंबी आह)

लौट आ, ओ फूल की पंखड़ी

फिर

फूल मे लग जा

चूमता है धूल का फूल

कोई, हाय।[11]

**सन्दर्भ :**


1 The Principles of Art, R G Collingwood page 41

2 बात बोलेगी पर कब ? मलयज से बातचीत, सापेक्ष शमशेर अक, पृष्ठ 49

3 कला के तीन क्षण, एक साहित्यिक की डायरी, मुक्तिबोध

4 शमशेर की काव्यानुभूति की बनावट, डॉ विजयदेव नारायण साही, शमशेर, पृष्ठ 25

5 बात बोलेगी पर कब ? मलयज से बातचीत, सापेक्ष शमशेर अंक, पृष्ठ49

6 शमशेर एक ऐद्रजालिक कवि- डॉ. रघुवश, शमशेर, पृष्ठ 69

7 अमूर्त कला, कुछ और गद्य रचनाए, पृष्ठ 165

8 एक मुद्रा से' कुछ और कविताएं, पृष्ठ 138

9. मणिपुरी काव्य की एक विहंगम नन्हीं सी झाकी, काल तुझसे होड़ है मेरी पृष्ठ 85

10 T S Eliot, Selected poems

11 लौट आ, ओ धार, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 130

## ख. कविता में शब्द की सत्ता का इस्तेमाल

"My dear Degas, one does not make poetry with ideas, but with words "[1]

मलार्मे ने अपने चित्रकार मित्र देगास से यह बात कही थी जिसे वह अक्सर दुहराया करता था। काव्य भाषा की कला है। भाषा शब्दो से बनती है। भाषा एक व्यावहारिक सर्जना है। यह लोगो के आपसी संवाद से बनती है। और ये सवाद अक्सर व्यावहारिक रोजमर्रा के क्रियाकलापो से उपजे होते है। इसलिए भाषा की निर्मित लोगो की इस आपसी बातचीत और भगिमाओ से होती है। सच्चा कवि इसी जनभाषा और भगिमाओ को साधने की कोशिश करता है। यही से उसे वे शब्द और वाक्य मिलते हैं जो उसकी अनुभूति के रग मे ढलकर चमक उठते है। यह चमक और तेजी कवि की भाषिक समृद्धि पर निर्भर करती हैं। इसीलिए कहा जाता है कि कविता शब्द की साधना है। शब्दो की साधना से यहा तात्पर्य शब्दो के उचित प्रयोग से है। उनकी मितव्ययिता से है। शमशेर शब्दो की स्फीति के नही बल्कि मितव्ययिता के कवि हैं। उनका विश्वास "अरथ अमित अति आखर थोरे' में है। यह साधना उन्होने कठिन परिश्रम से अर्जित की है। उनका विश्वास है-

बात बोलेगी

हम नहीं

भेद खोलेगी

बात ही[2]

अभिव्यक्ति मे शब्दो की अर्थ परम्परा का गहरा महत्व होता है इसलिए अभिव्यक्ति मे जहा तक सभव हो सके कम से कम और नितान्त आवश्यक शब्द ही होने चाहिए। इसके साथ ही बात कहने का स्वाभाविक लहजा भी होना चाहिए। इसके अभाव मे अभिव्यक्ति कृत्रिम हो जाने का खतरा बना रहता है। शमशेर इस फन के उस्ताद है। उनका विश्वास है कि-

शब्द का परिष्कार

स्वय दिशा है[3]

काव्य प्रतिभा की मौलिकता बिना शब्द के परिष्कार के अधूरी है। कविता शब्दो मे सभव होती है। इसलिए शब्द का परिष्कार भी कविता की सृजन प्रक्रिया का आवश्यक अग है। किन्तु कविता केवल शब्दो के इस्तेमाल से नही बल्कि उनके क्रम से निर्मित होती है। शब्दो का महत्व उनकी आपसी टकराहट मे होता है। कविता मे प्रत्येक शब्द एक-दूसरे के पास रख देने से उनका अर्थ कैसा ध्वनित या झकृत होता है, यह उनकी आपसी रगड़ से पता चलता है। अर्थात् कविता मे अभिधात्मक नही बल्कि व्यजनात्मक अर्थ ही अभिप्रेत है।

शमशेर भाषा के रचाव पर नहीं बल्कि उसके नैसर्गिक होने पर बल देते हैं। अपने एक इंटरव्यू में उन्होंने कहा था- "कम कविताएं हैं अपेक्षाकृत कि जिनको मैंने, यों कहिए कि जिनके लिए, भाषा के साथ सघर्ष करना पड़ा, या किया है मैंने। वह अपनी ही भाषा अपने ढंग से लेकर

आयेगी और दे विल कम इन ए फ्लैश। वे लम्बी हो, या टूटी हुई विखरी हुई हो। सब एक रौ मे, जैसे कोई डायरी लिखता है। जैसे- यह नीला दरिया बरस रहा है' एक रौ मे लिखी हुई है।"[4]

शमशेर की भाषा नैसर्गिक है क्योकि उनके यहाँ-

मगर

मेरी पसली मे है- गिन लो

व्यजन   और उनके बीच मे है

स्वर[5]

यहाँ ऑख है जो कि 'अँखुआए हुए उपज आयी हो बहुत ही करीब बहुत ही करीब। उन्हे वह पैमाना चाहिए जो फोनिमिक्स पश्चिम और पूरब की भाषाओ की मिलन सीमा को आर्गनित करती है।

भाषा ध्वनि भी है। भाषा मे शब्दो के अनुशासित इस्तेमाल से उसमे नाद सौन्दर्य उत्पन्न होता है। शमशेर भाषा को उसके प्रत्येक शेड मे पकड़ना चाहते हैं। भाषा की चित्रात्मकता और उसकी ध्वनि उन्हे विशेष आकर्षित करते हैं। चित्रात्मकता तो भाषा की लिपि के उदय के साथ ही उसके साथ जुड़ी हुई है। अक्षरो का विकास चित्रलिपियो से ही हुआ है। इसका सबसे बड़ा उदाहरण चीनी भाषा की लिपि है। भाषा के इस चित्रात्मक सौन्दर्य का काव्य मे कैसा प्रयोग किया जा सकता है इसे देखने के लिए उनकी 'चीन' कविता का उदाहरण सामने है। एक इंटरव्यू में उन्होंने कहा था "....मैं बहुत प्रभावित हुआ। मैंने सोचा हमें कम से कम यह जानना चाहिए कि

चीनी लोग अपने देश को कैसे पुकारते है, यानी एक तरह से अपनी मॉ को। यानी जैसे हम लोग कहते है- भारत। लिपि और उच्चारण दोनो। मूल बात मुझे यही कहनी थी कि दोनो देश एक हो। तो मैने कोशिश की, कि मै चीन देश के इन चीनी नामचिन्हो का मूल के अनुरूप ही अर्थ दू   तो मैने यह चिन्ह देखकर और अपनी कल्पना से   .   वैसे मैने इनके अर्थो की काफी हद तक रक्षा की है, केवल अन्तिम चिन्ह को छोडकर .   कविता लिखी।   पर मेरा मुख्य उद्देश्य वह सज्ञा अपने उच्चारण के साथ रखने का था।"[6] यद्यपि शमशेर जी का मानना था कि सज्ञाए अपने उच्चारण के साथ ही होती है फिर भी 'चीन' कविता मे उच्चारण से पहले लिपि की चित्रात्मकता हमारा ध्यान खीचती है-

मैने

क्षितिज के बीचोबीच

खिला हुआ देखा

कितना बड़ा फूल।

देखकर

गभीर शपथ की एक

तलवार सीधी अपने सीने पर

रखी और प्रण लिया

कि

वह आकाश की माँग का फूल

जब तक मैं चूम न लूंगा

चैन से न बैठूंगा।

और महान सदेश लिए

दौड़ता हुआ सदेश वाहक हो जैसे-

मै दौडा [7]

'चीन' कविता मे लिपि की इस चित्रात्मकता के जरिए शमशेर उस अमर सौन्दर्य के किसी इशारे को पकड़ने की कोशिश करते है। वह अमर सौदर्य का इशारा शाति और भाईचारे का है। यह किसी भी रचना का मूल सदेश हो सकता है। इस महान सदेश को लेकर दौडता हुआ धावक प्राचीन ग्रीक के ओलपिक मैदानो से निकलकर भागता हुआ हमारी चेतना मे समा जाता है। बीच का सारा काल प्रवाह जैसे अनुपस्थित हो गया हो। महान सदेश शायद इतने ही शाश्वत होते है। इसी तरह भाषा की ध्वन्यामकता की तरफ भी शमशेर आकर्षित होते हैं। 'मणिपुरी काव्य साहित्य की एक विहगम नन्ही-सी झॉकी (एक प्रयोग) कविता सिर्फ भाषा के ध्वनि सौन्दर्य की तरफ आकर्षित होकर लिखी गयी है। "कुछ नितान्त अजनबी किन्तु आकर्षक शब्दो के मात्र उच्चारण सुखके लिये ये मुक्तपद लिखे गए।"[8] कविता के साथ दिये गये निवेदन मे वह कहते हैं- "चार-पाच साल हुए, मणिपुरी साहित्य समिति के एक प्रचार पैम्पलेट ने मुझे कौतुक वश आकृष्ट किया। उसी से अकस्मात् प्रस्तुत प्रयोग के लिए प्रेरणा मिली। मेरे मन मे सवाल उठा- क्या किसी नितान्त अपरिचित भाषा के संज्ञा-पदों को इस प्रकार मुक्त पदो मे नहीं बॉधा जा सकता कि वे अपने ध्वन्यात्मक आकर्षण के साथ हमारे कानों मे गूँजने लगें- और सम्भवत फलस्वरूप, हम उनके मूल सदर्भों को जानने के लिए थोड़े-बहुत उत्सुक हो उठें ? मेरी सृजनात्मक कुलबुलाहट ने जवाब दिया बेशक बाँधा जा सकता है : कोशिश कर देखते हैं?"[9]

शमशेर सिर्फ लिपि की चित्रात्मकता तथा भाषा की ध्वनि से ही आकृष्ट नही होते बल्कि वर्णमाला का सौन्दर्य भी उन्हे कुछ सीखने-सिखाने को आकृष्ट करता है। इसका उदाहरण उनकी 'यूनानी वर्णमाला का कोरस' कविता है। इस कविता मे भी वे धर्मनिरपेक्षता तथा शान्ति की खोज अपने ढ़ग से करते है।

शमशेर सिर्फ शब्दो के ही नही शब्दो के बीच के मौन के भी कवि हैं। शायद उनका लक्ष्य सगीत की वह पूर्णावस्था है जहॉ पहुॅचकर 'बोल' लुप्त हो जाते है। डॉ  नामवर सिह ने सही लक्ष्य किया है कि 'शमशेर शब्द से ही रग का काम लेते है, पत्थर का भी और सुर का भी। विरोधाभास प्रतीत होते हुए भी यह सच है कि शमशेर भाषा के जादूगर भी हैं और भाषा के वैज्ञानिक भी। एक ओर वे जादूगर की तरह भाषा से इद्रजाल रचते हैं तो दूसरी ओर एक वैज्ञानिक की तरह हर शब्द का नपा-तुला प्रयोग करते है। उन्होने शब्द को उसकी आदिम जादुई शक्ति भी लौटाई और शब्द को छायावादी अनिश्चतार्थकता से मुक्ति भी दिलाई। शमशेर मे 'साराश जैसे रूप' और लीलाए जैसी असगतियां' साथ-साथ निवास करती हैं और इस प्रक्रिया मे कभी-कभी अधूरा वाक्य अधर मे ही लटकता रह जाता है। सिर्फ संयोग की बात नहीं कि शमशेर की अधिकाश कविताओं की परिणति 'मौन' में होती है और बीच-बीच मे शब्द के स्थान पर खाली जगह तो अक्सर मिलती है।

..... भाषा की सरहदों को छू लेने की कोशिश वे जरूर करते रहे लेकिन सिर्फ उस विशिष्ट सच्चाई को ठीक-ठीक पकड़ने के लिये जिसे अपनी समझ से सिर्फ उन्होंने देखा था। कहना न होगा कि इस तरह शब्द के माध्यम से शमशेर ने कविता मे एक अभिनव आश्चर्य लोक

अथवा सौन्दर्य लोक की सृष्टि की, जो आज भी अद्वितीय है, बल्कि समय के साथ उसकी काति दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है।"[10]

शमशेर की कविता मे अर्थ-अक्सर गलत या अपर्याप्त शब्द का चुनाव नही करता। स्वत स्फूर्त बिम्ब का शब्दायन या वक्तव्य का सप्रेषण हो, शमशेर साधारणत अपरिहार्य शब्द का ही चयन करते है। बेहद विनम्र और शात ढग से शब्द का अभूतपूर्व प्रयोग- शमशेर की अपनी विशेषता है।

बिम्ब की सश्लिष्टता और वाछित अर्थ के लिए अचूक शब्द की तलाश का उत्तेजक उदाहरण इन पंक्तियो मे है-

एक नीला आईना

बेठोस-सी यह चॉदनी
और अन्दर चल रहा हूँ मैं
उसी के महातल के मौन मे।
मौन मे इतिहास का
कन किरन जीवित, एक बस।

एक पल के ओट मे है कुल जहान।[11]

इस कविता मे प्रयुक्त शब्द 'बेठोस' बरबस हमारा ध्यान आकृष्ट करता है। चादनी ठोस नहीं हो सकती। शमशेर उसके ठोस न होने पर ही बल देना चाहते हैं। यह विशेषता तरल होने से भिन्न कोमल या उज्ज्वल से भी अलग। इसलिये शमशेर सामान्य शब्द ठोस के पहले निषेध

का उपसर्ग लगाकर उसे चादनी का पर्यायवाची बना देते है।

भाषा की इसी एडवेचर वृत्ति और दायित्वबोध के कारण शमशेर की कविता रसिक से धैर्य बल्कि बकौल मलयज 'एक तरह के आदर भाव' की माग करती है। क्योकि शमशेर की कविता मे "शब्द के कर्म और मर्म को अधीर त्वरा के साथ पकडने और पहचानने वाले अद्वितीय कवि शमशेर के यहा अन्दर पछाड़ खाता समुद्र है, तो बाहर प्रशान्त नीला दरिया। उनकी अनुभूतियो मे आदिम उर्जा है, तो उनके काव्य कौशल मे अत्यन्त आधुनिक परिष्कार। अतत शमशेर की कविता के केन्द्र मे है, आदमी, दो कुहनियो से पहाड़ो को ठेलता हुआ, पतझड़ के जरा अटके हुए पत्ते-सा, ताक पर अपने हिस्से की धरी होने पर बड़ी रात गए काम से लौटने पर शक करता हुआ, होली के भय, दीवाली और ईद-मुहर्रम के एक ही भाति के आतक से त्रस्त, अन्तिम लोरियो के बजाय अधेरे की तलवारो से जूझता हुआ, गगा मे कीचड की तरह सोता हुआ, बीती हुई होनी और अनहोनी की उदास रंगीनियो मे फकत उलझा हुआ, शब्द के परिष्कार को स्वय दिशा मानता हुआ, हृदय की सच्ची सुख-शान्ति का बहुत आदिम बहुत अभिनव राग गाता हुआ आदमी। शमशेर की कविता हमारे वक्त का जतन से सहेज कर रखा गया तिमसालदार आईना है वह आदमीनामा, जो व्यथा और हर्ष के साथ अनेक जीवन छवियों को लेकर अनेक रगतो मे लिखा गया है।"[12]

शमशेर सिर्फ के शब्दों के बीच के मुखर मौन के ही कवि नहीं हैं बल्कि अक्सर ही वे शब्दो के दुहराव-तिहराव और यहाँ तक की शब्दों की तोड़फोड़ से भी अपनी कविता में नयी अर्थछवियॉ भरने की कोशिश करते हैं। उनकी यह प्रयोग वृत्ति किसी वाद की वजह से नहीं है

बल्कि अपनी कला साधना और उसकी अभिव्यक्ति को और अधिक धारदार, पैना और मर्मस्पर्शी बनाने  की उनकी कोशिश का एक अग है।

**सदर्भ :**


1. Poetry, Language and Thought, Paul Valery, The Modern Tradition, Page 77

2 बात बोलेगी- प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 43

3 सारनाथ की शाम, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 130

4 मलयज और नेमिचद्र जैन से बातचीत, पूर्वग्रह 12-13, पृष्ठ 20

5 नीला दरिया बरस रहा है, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ट 163

6 कवियो का कवि शमशेर, रजना अरगड़े से बाचीत

7 चीन देश का नाम, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 98

8 मणिपुरी काव्य की एक विहगम नन्हीं सी झांकी, टूटी हुई बिखरी ुई, पृष्ठ 49

9. वही

10 शमशेर, वह आखिरी मुलाकात, डॉ नामवर सिह, रविवारी जनसत्ता 23 मई 1993

11 एक नीला आईना बेठोस, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 107

12 भूमिका, टूटी हुई, बिखरी हुई, अशोक वाजपेयी

## ग. शब्दार्थ की अर्न्तध्वनियाँ और कलात्मक संधान की विभिन्न प्रक्रियाएँ-

इन खाको मे कुछ है जो महज इशारे है। जिनमे व्यजना की परोक्षता ही केवल व्यक्त हुई है। जैसे रेखागणित की शक्ले होती है। उनका शाब्दिक अर्थ कुछ भी नही है। मुमकिन है ऐसी कविताए बहुत मुद्दत बाद 'समझ मे आये।'

मगर कुछ पाठको के दिल को ये अपनी तरफ जरूर खीचेगी, मुझे पूरा यकीन है।"[1]

[2]"इनके इस खिचाव मे ही इनकी कविता छिपी हुई है, शाब्दिक अर्थो मे नही। शाब्दिक अर्थ सिर्फ इशारो के हलके पर्दे है। क्योकि बाजदफा हमे अपने जी का हाल सिर्फ इशारो की उलझी हुई दुनिया-सा लगता है। अक्सर नही पता लगता कि आखिर वह चाहता क्या होगा, वह अनमन सा क्यो है। उसके दुख या सुख या बेचैनी या खामोशी को, या खुशी या उम्मीद को, अगर मूर्त रूप मे लगभग ज्यो का त्यो प्रकट किया जाय उस तरह नही जिस तरह उपन्यास मे कोशिश की जाती है, या जिस तरह सगीत की लय मे, अलाप मे हमको मिलती है।"[2]

"बल्कि-उपन्यास और सगीत-कुछ दोनो के गुण लेकर (जिदगी के कुछ खास क्षण अक्स मे आ ही जायेगे) ऐसे शब्दो मे उन्हे रख दिया जाय, जो अन्दर ही अन्दर उमड़ते-घुमडते हुए राग के बोल की तरह आप ही आप फूट पड़ते हो जो कमल नाल की तरह चेतना की सतह को छूने के लिए ऊपर उभरकर आने को मजबूर हो और अपने प्राणो की ज़िद के साथ खिल पड़ते हो, और आप फौरन उन शब्दो को (जिस भी "लय" या "गति" या अपने "छन्द" में बंधकर वह आये हैं) उसी तरह रख देते हैं- तो इस रूप को आप कहाँ तक अपनी समझ से दूर समझेगे?

और उसे अगर आप 'समझ लेगे' तो क्या समझा भी सकेगे?[3]

यह 'समझ लेने और समझा सकने का सकोच और दुविधा शमशेर की कविताओ के साथ शाश्वत रूप से जुडी हुई है। उनके यहॉ शब्द अन्दर ही अदर उमडते-घुमडते हुए राग के बोल की तरह आप ही  फूट पडते है। इन शब्दो को शमशेर जिस भी रूप मे वे आते है उसी रूप मे रख देने मे अपनी कला की सार्थकता मानते है। शब्द और अर्थ की अर्न्तध्वनिया उनके यहॉ अपना रूप लेकर प्रकट होती है। शब्दार्थ उनके यहॉ सिर्फ इशारो के हल्के पर्दे है। इन इशारो को वे सगीत की लय और आलाप की तरह साधते है। इसका परिणाम होता है कि शब्दो का लोप सा होने लगता है। शब्दो के बीच का निर्वात् बढ़ने लगता है और कभी-कभी तो स्वय शब्द भी टूटकर बिखर जाता है पूरे विन्यास मे अपनी अर्थवत्ता की चमक को और भी तीव्र और मारक बनाते हुए-

> अजब बेअदबी है जमाने की – कि
>
> कि
>
> अक्स है          इतिहाई गहरा
>
> वही दरिया
>
> और वो मुझे ले गया डुबा
>
> जहॉ इतिहाई गहराइयो के सिवा
>
>               और कुछ न था
>
> एक इतिहाइयत. … . हाइयत
>
> जो कि महज महज          महज़

मै हूॅ– और

कुछ नही

यहाॅ।[4]

शमशेर की असली समस्या शब्द और अर्थ की गूजती अर्तध्वनियो को सही रूप देने की है। शायद इसीलिए उन्होने गजल, मुक्तक, गीत, सानेट, दोहा और छायावादी, रोमैण्टिक, सुर्रिलिस्ट, प्रयोगवादी तथा प्रतीकवादी काव्य की रचना एकसाथ की है। 'कुछ और कविताए' के अपने वक्तव्य मे वे कहते है "मेरे कवि ने कभी किसी 'फार्म', शैली या विषय का सीमा बन्धन स्वीकार नही किया। फैशन किन विषयो पर लिखने का है, कौन-सी शैली चल रही है, किस 'वाद' का युग आ गया है या चला गया है- मैंने कभी इसकी परवा नही की। जिस विषय पर जिस ढग से लिखना मुझे रुचा, मन जिस रूप मे भी रमा, भावनाओ ने उसे अपना लिया, अभिव्यक्ति अपनी ओर से सच्ची हो, यही मात्र मेरी कोशिश रही-"[5]

शमशेर अपने मन मे घुमड़ते भावो को रूप देना चाहते है। उनकी कोशिश है कि यह भाव अपनी लय के साथ ज्यो का त्यो उनकी कविता मे आये। इसमे ही वे अपनी अभिव्यक्ति का सच्चापन मानते है। उनकी असली खोज का मैदान कला-माध्यम है। इसके लिए उन्होने पर्याप्त तैयारी की है। उनकी कला मे पौर्वात्य और पाश्चाय कला माध्यम रचे-बसे हुये है। उर्दू और हिन्दी की रीतिकालीन कविता का उनके मानस पर गहरा असर है। उनके अदर घुमड़ते हुए भाव इसीलिए अक्सर गजलो या कतओ के माध्यम से अभिव्यक्त होते हैं। 'घनीभूत पीड़ा' कविता लिखते वक्त सबसे पहले उनके दिमाग मे एक शेर आया और फिर पूरी कविता। इस कविता की रचना-प्रक्रिया पर बात करते हुए उन्होने बताया था "अक्सर ऐसा ही होता है, कोई चीज जब

बहुत तकलीफ देती रहती है तो पता नही क्यो वो छन्द-बद्ध होके और तुको के साथ इस रूप मे आ जाती है। इसके साथ भी यही हुआ। 'घनीभूत पीडा' का पहला शेर ये बनके आया जो मैने लिखा-

जबॉदराजियॉ खुदी की रह गई।

तेरी निगाहे कहना था सो कह गई।

हमारी खुदी या हमारा अहम् जो है बहुत जबॉदराज था अपने डिफेन्स मे कुछ भी कह रहा था, वो सब एक तरफ रह गया, तेरी निगाहे कहना था सो कह गई।"[5]

शमशेर के अर्तमन मे गूजती हुई लय अपना रूप खुद लेके आती है। कलामाध्यमो पर उनका जबर्दस्त दखल है। उन्होने परपरा से और अपने अनुभव से काफी कुछ सीखा है। शमशेर ने अपनी गजलो मे 'श्रृगार, प्रेम, धर्म, देशप्रेम, मजदूरो की बात आदि को विषय बनाया है। उन्होने गजल का परम्परगत रूप ही ग्रहण किया है। वे मूलत प्रेम और सौंदर्य के कवि है किन्तु गजलो मे आम आदमी की तकलीफो का भी बयान है-

"आज फिर देर से लौटा हूॅ, बड़ी रात गए
ताक पर ही मेरे हिस्से की धरी है शायद।"[7]

या

जहॉ मे अब तो जितने रोज अपना जीना होना है।
तुम्हारी चोटे होनी हैं हमारा सीना होना है।[8]

प्रेम और सौंदर्य को लेकर भी शमशेर ने ग़ज़ले लिखी हैं। उनकी सादगी और काव्यसौदर्य मीर तकी मीर की शायरी की याद दिला देता है।

हजार बार हम उसे चाहे कि अब न चाहे और

जो सॉस-सॉस मे रम जाए वो तो क्यो कर हो[9]

या

मुस्कराते हुए वह आए, मेरी ऑखो मे

देखने क्या सरोसामान कजा का बाधा[10]

शमशेर ने अपनी गजलो मे उर्दू शब्दो और मुहावरो का प्रयोग किया है। उनके कथन की सादगी मे व्यक्त होने वाला अर्थ अपने पूरे सौदर्य के साथ उनकी गजलो मे मौजूद है।

शमशेर ने रुबाई और कतआ भी लिखे है। रुबाई फारसी की विधा है। उमर खैय्याम की रुबाई बहुत प्रसिद्ध है। उनकी एक रुबाई प्रस्तुत है-

था बहते सदफ मे बन्द यकता गौहर

ऐसी दुनिया मे किसको तकता गौहर

दिल अपना जो देख सकता ठहरा है कहॉ

दरिया का सुकून देख सकता गौहर[11]

उन्होने कतआ विधा मे भी रचना की है। लेकिन बहुत अल्पसख्या मे। उनके एक किता की कुछ पक्तिया यहॉ पेश हैं-

आप भी किस हवा मे हैं, शमशेर।

आप और शेर का यह कारोबार।।

माना, माना, माना कि शेरो-फने-लतीफ़

आप की जान हैं, मगर सरकार–

आपकी जान की है क्या कीमत।

आप जैसे पडे हुए है हजार।[12]

शमशेर की भावना ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए सॉनेट का माध्यम भी ढूढा था। हालाकि शमशेर के लिखे कुल सॉनेट की सख्या पाच-छह से ज्यादा नही है किन्तु अपनी अभिव्यक्ति मे वे सफल है। इन सानेटो मे शमशेर ने केवल चौदह पक्तियो का बन्धन निभाया है। उनका एक प्रसिद्ध सॉनेट है-

सानेट और त्रिलोचन   काठी दोनो की है

एक। कठिन प्राकार मे बधी सत्य सरलता।

साधे गहरी सॉस सहज ही   ऐसा लगता

जैसे पर्वत तोड़ रहा हो कोई निर्भय

सागर-तल में खड़ा अकेला, वज्र हृदयमय।

नैसर्गिक स्वर मे जब ऐसी गूढ़ अगमता

स्वय बोलती हो जो युग की वास्तविकता

को मानो ललकार रही हो, तब नि सशय

अन्तस्तल खिल-खिल जाता, चट्टाने भीतर

दुखती-सी कसमस जीवन की

-बढ़कर उन पर

सीधी चोट लगाऊँ, उनको ढ़ाऊँ बरबस

डूबी हुई खान की निधियॉ अपनी सरबस

लाऊँ ऊपर!

अपने अदर ऐसा ही प्रण

लिए हुए है शायद सानेट और त्रिलोचन।[13]

शमशेर ने गीत (लिरिक) की रचना भी की है। इनमे लय की प्रमुखता है। उनका प्रसिद्ध गीत है 'सावन की उनहार।'

सावन की उनहार

ऑगन–पार।

मधु बरसे, हुन बरसे,

बरसे– स्वाति धार

ऑगन पार।

सावन की उनहार–[14]

इस गीत की रचना-प्रक्रिया की चर्चा करते हुए शमशेर जी ने बताया था "यह गीत दरअसल गाते हुए लिखा गया था। इत्तफाक से इसकी लय भी मेरे दिमाग मे इस वक्त गूँज रही है। . हुआ यह था कि मेरे सामने एक आईना रखा था बड़ा सा और वो मेरे ड्राइग बोर्ड का काम दे रहा था। उस पर मैंने पानी से ड्राइग पेपर चिपका के फिर कुछ रग मैने बनाये . . रग बना लिये थे, चटख रग और मै एक तस्वीर बनाना चाहता था। कल्पना यह थी कि उसमे कि पहाडो के सिलसिले है .सामने एक पहाड़ है जिस पर कुछ जगल है। पीछे जो पहाड़ है वो ज़रा दूर-दूर पर हैं। तो ये पहाड़ वैसे तो पहाड़ो जैसे थे, लेकिन एक पहाड खालिस सोने का था, एक पहाड़ खालिस हीरे का, एक उसका था . ... .क्या कहते है ... लाल पत्थर का। और इस तरह से ये पहाड़ थे। कह लीजिये कि एक पर्वत प्रदेश-जादू

का पर्वत प्रदेश था। और वहॉ वर्षा भी होती थी। वर्षा रिमझिम हो रही थी। जो रिमझिम का रग था वो दूधिया-दूधिया जैसा था। बूदे गिर रही थी और एक सिलसिला उनकी हलकी-हलकी झडी लगी हुई थी। तो वो बन गया घन बरसे, हुन बरसे,- स्वाति धार। मेरा ख्याल है कि ये घटे भर डेढ़ घटे तक, जब तक मै बनाता रहा, चलता रहा- इसी तरीके से। बार-बार मै रिपीट करता रहा। और चित्र बनते बनते मुझे बहुत अच्छा लगा। अफसोस है कि वो अब नही है, हलॉकि मै उसको रखना चाहता था। तो वो चित्र भी मुझे अभी तक हान्ट करता है उसी तरह से और उसकी लय, उसकी तन्मयता भी मुझे हान्ट करती है। बाद मे मुझे यह याद रहा और कुछ अरसे के बाद उसे शब्दो मे लिख लिया, लिपिबद्ध कर लिया।''[15]

इस तरह एक चित्र बनते-बनते एक गीत की रचना हो गयी। शमशेर सौदर्य की लय का सधान करना चाहते है चाहे वह जिस भी कला माध्यम मे उन्हे पकड़ मे आ जाये। कला माध्यमो का अर्तसम्बन्ध उनकी कविता मे एक अलग तरह का सगीत भरता है। सगीत की लय का शोध उनका चरम लक्ष्य है। इसे वे शब्दो मे और उसके अर्थ मे पाना चाहते हैं। यह एक कठिन प्रक्रिया है। किन्तु शमशेर की कलात्मक दक्षता उसे हासिल कर लेती है और अपने पाठक को वे अपने रग मे बहा ले जाने मे सफल हो जाते है।

# सन्दर्भ


1 उदिता अभिव्यक्ति का सघर्ष, पृष्ठ 107

2 वही, पृष्ठ 108

3 वही

4 एक नीला दरिया बरस रहा है, चुका भी हूँ नही मै, पृष्ठ 9

5 कुछ और कविताएँ, वक्तव्य, पृष्ठ 75

6 पूर्वग्रह 75, नामवर सिह और अशोक वाजपेयी से बातचीत, पृष्ठ 3

7 सुकून की तलाश, पृष्ठ 103

8 सुकून की तलाश, पृष्ठ 29

9 सुकून की तलाश, पृष्ठ 27

10 वही, पृष्ठ 21

11 वही, पृष्ठ 51

12 वही, पृष्ठ 59

13 कुछ और कविताएँ, पृष्ठ 91

14 कुछ कविताएँ, पृष्ठ 60

15 पूर्वग्रह 75, नामवर सिंह और अशोक वाजपेयी से बातचीत पृष्ठ 5

## घ. शब्दार्थ और शब्द की लयात्मकता के विभिन्न प्रयोग

शमशेर के मुताबिक, अन्दर ही अन्दर उमडते-घुमडते हुए राग के बोल की तरह आप ही आप फूट पडने वाले शब्दो की कला को समझ लेना और समझा भी सकना प्रारभ से ही उनके कवि के लिए चुनौती बना हुआ है। प्रारम्भ से ही उन्होने "अपनी बातो को खास अपने लहजे मे, खास अपने मन के रग मे, अपनी लय, अपने सुर मे, खोलकर एक ख़ाब की तरह, एक उलझी हुई याद के बहुत अपने छाया चित्र की तरह, रखने की कोशिश"[1] शुरु कर दी थी। साथ ही उनको "यथासभव निर्दोष शिल्प के उच्चतम स्तर"[2] पर कठोरता से आग्रह भी बराबर रहा है। इसलिए उनकी खाम-खयालियो को बाधने वाले "मौजू-छदो" को "दिल की लहरे ही नाप सकती है।"[3]

ऐसे लयान्वेषी और शब्द शिल्पी होकर भी शमशेर अपने "कवि के चरित्र" को "आज का नया" नही, बल्कि "जरा पिछला" मानते है। परम्परा की विभूति को सॉस की तरह "हृदय मे भरकर" गीत गाना उनका आदर्श रहा है। इसलिए परम्परागत छदो का अभ्यास भी उन्होने गाहे-ब-गाहे कर लिया है। "उदिता अभिव्यक्ति का सघर्ष" मे उन्होने हिन्दी उर्दू की कुछ प्रचलित लयो को अपनाने की कोशिश की है। उसकी अनेक कविताओ मे सोलह मात्राओ की लय बधी है। 'कवि कला का फूल हूँ मैं" कविता मे विधाता की लय भी अच्छी तरह सध गयी है। शायद इसीलिए 'उषा', 'सागर-तट', 'एक पीली शाम' आदि मे वही लय बार-बार उभरी है। गजलो मे उर्दू की बहरें अपनायी गयी हैं।

बधी लय के ये गिने-चुने उदाहरण ही उनके यहाॅ मिल सकते है। अक्सर तो उन्होने भाषा की तरह, लयो को भी "अपने भावो के साचे मे ढाल"[4] लिया है। लय को भाव के अनुकूल ढालने की जो परम्परा हिन्दी मे पन्त ने चलायी थी, उसे भाव-लय का नाम दिया गया है। इस भावलय के साथ निराला ने मुक्तछद का प्रवर्त्तन किया। अपनी प्रारभिक कविताओ मे शमशेर ने इस भाव-लय को साधने की कोशिश की है। इसीलिए 'उदिता' की तमाम कविताओ पर छायावादी कवियो निराला और पत की टेकनीक का प्रभाव है-

सहन् सहन् बहता है वायु

मुक्त उसासो का स्वर भर।

सम्हल-सम्हल कर झुकती डाल

आकुल-उर तरु का मर्मर।

रह जाते है सिहर-सिहर

मृदु कलिका के विस्मित गात

बहका फिरता मधुप अधीर,

तितली अस्थिर-गति अवदात।[5]

शमशेर की बाद की कविताओ में "पल-पल परिवर्तित प्रकृति-वेश" की तरह तितली की अस्थिर गति अवदात नही रह जाती। वहाॅ "तितलियाॅ गोया चमन की फिजा मे नश्तर लगाती है।"[6] यानि की भाव साधना और तद्नुरूप लय-सधान दोनों ही परिष्कृत और सश्लिष्ट हो गयी हैं।

'आर्ट ऑफ रीडिंग' की दृष्टि से निराला ने मुक्तछद की लय का आधार घनाक्षरी को माना था। घनाक्षरी के व्यंजनों का सगीत उन्हे पौरुषमय लगता था और स्वरो का सगीत स्त्री

रूप।[7] शमशेर ने भी भावुकता और ओजपूर्णता के आधार पर "मुक्तछद के कवियो के दो रूप स्त्रैण और पौरूषमय"[8] स्वीकार किये है। निराला और पत के काव्य-कौशल की तुलना करते हुए वे लिखते है "कलाकारो मे जहा छद, गति और लय मे' एक 'निराला' शुरु से अब तक अपनी मिसाल आप है, उसी तरह शब्दो के माधुर्य और कोमल सौदर्य, साथ ही पूर्ण प्रकारात्मक न्यास तथा सुरुचिपूर्णता मे पत का अपना अकेला स्थान है।"[9] अत शमशेर के लिए निराला मुक्तछद की ओजपूर्ण लय के आदर्श थे। पत की सुरुचिपूर्ण शब्द-माधुरी ने उन्हे मोहित किया है। उनके अनुसार "निराला जी का मुक्तछद बहुधा स्वर-प्रधान होता है- अथवा स्वर का प्राधान्य ले उठता है। मात्रिक छदो के प्रयोग मे स्वर का महत्व वे कम नही होने देते, उनकी कविता मे ओज का एक विशेष कारण यह भी है।"[10]

मुक्तछद के बारे मे 'परिमल की भूमिका' मे निराला लिखते हैं "छद भी जिस तरह कानून के अन्दर सीमा के सुख मे आत्मविस्मृत हो सुन्दर नृत्य करते, उच्चारण की श्रृखला रखते हुए श्रवण-माधुर्य के साथ-ही-साथ श्रोताओ को सीमा के आनन्द मे भुला रखते है, उसी तरह मुक्त छद भी अपनी विषम गति मे एक ही साम्य का अपार सौदर्य देता है, जैसे एक ही अनन्त महासमुद्र के ह्वदय की सब छोटी-बड़ी तरगे हो, दूर प्रसरित दृष्टि मे एकाकार, एक ही गति मे उठती और गिरती हुई।"[11]

मुक्तछद की विषम गति मे 'एक ही साम्य' उसकी लयात्मकता है। इसी के सधान से उसमे अपार सौदर्य की सृष्टि होती है। यह लय पूरी रचना मे "ह्वदय की सब छोटी बड़ी तरगो की" तरह एकाकार और एक ही गति" में उठती और गिरती हैं। जैसे कि हम साँसे ले रहे हो।

हमारी सॉसो मे समाई हुई लय

मैने शाम से पूछा—

या शाम ने मुझसे पूछा

इन बातो का मतलब?

मैने कहा—

शाम ने मुझसे कहा

राग अपना है।

x x x x

उसने मुझसे पूछा, तुम्हारी कविताओ का क्या मतलब है ?

मैने कहा— कुछ नही।

उसने पूछा— फिर तुम इन्हे क्यो लिखते हो?

मैने कहा— ये लिख जाती हैं। तब

इनकी रक्षा कैसे हो जाती है?

उसने क्यो यह प्रश्न किया?

मैने पूछा

मेरी रक्षा कहॉ होती है? मेरी सॉस तो—

तुम्हारी कविताएं हैं उसने कहा। पर—

इन सॉसो की रक्षा कैसे होती आई?

वे सॉसो मे बंध गए; शायद ऐसे ही रक्षा

होती आई। फिर बहुत-से गीत

खो गए।[12]

जब से आधुनिक कविता ने छद का बधन तोडा है लय प्रधान हो गयी है। कवि अपने जीवन और परिवेश, अपनी सासो की गति, हृदय की धडकन, दिन-रात सबमे निहित लय की खोज करना चाहते है। हिन्दी कोश मे लय के बारे मे लिखा है- "लय की निष्पत्ति गति प्रवाह और यति, विराम के पारस्परिक एव क्रमिक सघात से होती है। लय का स्वरूप तत्त्वत आवृत्तिमूलक है तथा उसकी व्याप्ति दिक् और काल दोनो मे है। सगीत और कविता मे लय काल सापेक्ष रहती है और चित्रकला, मूर्तिकला और वास्तुकला मे दिक् सापेक्ष इस प्रकार लय की व्याप्ति सभी ललित कलाओ मे पायी जाती है। गायन, वादन और नृत्य, सगीत के इन तीनो अगो को परस्पर सूत्रबद्ध करने वाली वस्तु लय ही है। काव्य मे यह शब्द संगीत के क्षेत्र से ही आया प्रतीत होता है। सगीत शास्त्र मे लय के तीन भेद मिलते है- (1) द्रुत, (2) मध्यम, (3) विलम्बित।

लय अमूर्त और स्वयम्भू होती है। लय की एक महत्वपूर्ण विशेषता उसकी सम्भरण शक्ति (Power of integration) है, जिसके द्वारा वह विभिन्न तत्वो को संग्रथित करती हुई सश्लिष्टता प्रदान करती है। उसका एक और उल्लेखनीय गुण है अपने क्रमिक सस्पर्श से भावावेग को उद्दीप्त करने की क्षमता।

कला, काव्य और सगीत से ही नही, सामान्य जीवन मे भी लयतत्व की घनिष्ठ व्याप्ति मिलती है। श्वास-प्रश्वास, हृदयगति, ऋतु-चक्र, दिन-रात आदि का अनुभव क्रमिक रूप मे लयात्मकता के साथ ही होता है।"[13]

शमशेर ने इस शाश्वत लय को उसके अनेक छायावीथियों में पकड़ने की कोशिश की

है। उनका दृढ विश्वास है कि ससार की प्रत्येक वस्तु की अपनी एक निजी रिद्म है। इस रिद्म का सधान उन्हे अपनी काव्यवस्तु की खोज से ज्यादा महत्वपूर्ण लगता है। इसीलिए उनकी कुछ कविताओ मे हो सकता है हमे कोई अर्थ न मिले किन्तु लय वहा अवश्य मौजूद होगी। उनकी एक कविता का उदाहरण-

गाये मैली, सफेद, काली, भूरी।

पत्थर ढुलके पडे। पेड स्थिर नीरव।

दो पहाडियॉ धूम-विनिर्मित, पावन।[14]

इस कविता के विन्यास मे शब्द भी पत्थरो की तरह ढुलके पडे है। एक अजीब सी असम्बद्धता पूरी कविता मे व्याप्त है। लेकिन इन सबमे एक लय है। वह सृष्टि की लय है। शमशेर ने इसका सधान कर लिया है। यह लय दिक् सापेक्ष है। 'काल-कालोपरि' नही है। यहॉ सीन बदल सकता है किन्तु लय नही। इसीलिए इस कविता को पढ़ते हुए हमे मजीत बावा के चित्र अपनी आखो मे उतरते प्रतीत होते हैं। इस कविता मे गति विलम्बित हैं। एक सूफियाना ठाठ सर्वत्र व्याप्त है। जो हमे भी भाव की उसी उच्च भूमि पर ले जाकर छोड़ देता है।

शमशेर की दृष्टि वस्तु पर नही लय पर टिकती है। उनके यहॉ सृष्टि की लयात्मकता ही सौदर्य है। पल-पल बरसता हुआ सौंदर्य। अपने एक इटरव्यू मे वे कहते हैं' "हर चीज की अपनी एक रिद्म होती है। शुरु में यह मेरी बहुत कोशिश होती थी कि जिस चीज को मैं देख रहा हूँ . . और यह बात आई पेटिंग की तरफ से, यानी लय या रिद्म जो है वो सगीत वाली पेंटिंग मे भी होती है जो कविता में भी आती है। भावनाओं की भी एक लय होती है। इसमे

मै एक मोटी सी मिसाल यह भी देता हूँ कि आप जितने पेडो को देखे, नीम का पेड़, बरगद के पेड़ को देखे, इमली का देखे और तमाम केले वगैरह हर एक कि रिद्म अलग-अलग है। जब हम उनका चित्रण कर रहे है तो जो उनकी खास अपनी रिद्म है, वो आनी चाहिए। जो बहुत बडे कवि है इनके यहाॅ अनायास वो आती है और हम महसूस करते है कि वो वस्तु स्वय बोल रही है। इसी तरह शब्दो पर, उसकी लय पर और सगीत पर इसीलिए ध्यान जाता है कि वही- तो मेरे काम की है।"[15]

शमशेर शब्दो की लय और सगीत पर ध्यान देते है। वे अपनी काव्यभाषा की झकृति से सिम्फनी की सृष्टि करना चाहते है। चाहे उनकी बाख के सगीत को सुनकर लिखी गई कविता हो चाहे 'घनीभूत पीड़ा' लक्ष्य उस सिम्फोनिक सौदर्य की प्राप्ति ही है। 'घनीभूत पीडा' को तो उन्होने सिम्फनी कहा भी है। इस कविता मे लय की खोज तो है लेकिन उसकी अपूर्णता का साक्षात्कार भी है। इस अपूर्णता की भरपाई के लिए चित्रकला का सहारा लिया गया है। गहन भाव अपनी लय अपने साथ लेकर आया है। लेकिन कवि को तृप्ति नही है। इसलिए कविता के साथ चित्र भी देना जरूरी समझा है।

शमशेर ने शब्दार्थ और शब्द की लयात्मकता के साथ कई तरह के प्रयोग किये हैं। वे हमेशा उस लय को पाने की कोशिश करते रहे हैं जो उन्हे अभिव्यक्ति की पूर्णता का सतोष दे सके। उन्होने चीजो को सीधे-सीधे तो ग्रहण किया ही है, कभी-कभी उनको गड्डमड्ड भी कर दिया है सिर्फ इस सश्लिष्ट स्थिति की लय प्राप्त करने के लिए। इसीलिए उनका-

"कवि घघोल देता है

व्यक्तियो के जल

हिला-मिला देता

कई दर्पनो के जल

जिसका दर्शन हमे

शात कर देता है

और गभीर

अत मे।[16]

यह प्रशान्ति उस सूफियाना नीमहोशी से बहुत मिलती-जुलती है जो शमशेर की कविताओ मे व्याप्त है। यह असीम और अनन्त की लय है। इसकी सिद्धि शमशेर करना चाहते है।

# संदर्भ


1 उदिता अभिव्यक्ति का सघर्ष, पृष्ठ 101

2 वही, पृष्ठ 103

3 वही, पृष्ठ 102

4 वही, पृष्ठ 105

5 उदिता अभिव्यक्ति का सघर्ष, पृष्ठ 29

6 वह सलोना जिस्म, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 88

7 निराला और मुक्तछद, पृष्ठ 72-73

8 दोआब, पृष्ठ 60-61

9 वही, पृष्ठ 39

10 वही, पृष्ठ59

11 परिमल की भूमिका, आधुनिक हिन्दी समीक्षा, पृष्ठ 61

12. राग, कुछ कविताए, पृष्ठ 17

13 हिन्दी कोश, पृष्ठ 585

14 प्रतिनिधि कविताए, गाये, पृष्ठ 39

15 पूर्वग्रह 75, नामवरजी और अशोक वाजपेयी से बातचीत पृष्ठ 6

16. प्रतिनिधि कविताएं, कवि घंघोल देता है, पृष्ठ 173

# ङ. रंगों और रेखाओं की परिणतियाँ

"कला से एक तरह से हम inner soul of the artist's personality देख सकते है। शब्द-ध्वनि, रग और रेखा द्वारा एक तरह से जीवन को ही देखते है। आन्तरिक जीवन को। I did painting entirely for my ownself's pleasure The eagerness to painting is transformed into words-paintings "[1]

शमशेर की मनोवृत्ति मूलत चित्रकार की है। उन्होने अपने चित्रकार न बन पाने की कसर को कविता मे पूरा करने की कोशिश की है। चित्रकार बनने के लिए उन्होने बाकायदा प्रशिक्षण भी लिया था। उनका कवि चीजो को चित्र की शक्ल मे पहले देखता है। उनकी कविता की चित्रमयता की बात अक्सर इसीलिए की जाती है। उनके यहॉ शब्दो के अपने रग है। शब्द और अर्थ उनकी कविता मे अपनी रगत लेकर आते है। शब्द और वाक्य का प्रयोग वे चित्रकार की भॉति करते है। अक्सर उनकी कविताऍ हमारे सामने पेटिंग्स के रूप मे साकार होती है। उनकी कविताए रूप, रस, गंध और स्पर्श के शब्द चित्र है। कविता और चित्रकला ये दोनो माध्यम उनकी चेतना मे घुलकर एक हो जाते है। उनके भावो की लय उन्हें अपने मे ढाल लेती है। वे शमशेर के 'राग' मे ढल जाती हैं। 'एक नीला आईना बेठोस,' 'उषा', 'एक पीली शाम', 'सीग और नाखून', 'शिला का खून पीती थी' आदि कविताए विम्बो के एक अलग संसार की सर्जना है। इन बिंबो मे कविता और चित्रकला आपस में घुलकर शमशेर की संवेदना के साचे मे ढल गई है। पिकासो के एक अलबम को देर तक उलटने-पलटने के बाद उन्होने 'पिकासोई कला' पर कविता लिखी-

कला-आत्मरूप यही कूची कोयला पत्थर

अगड-खगड़ चमडा चीनी मिट्टी।

हड्डी लकडी कागज कुछ भी कही भी

सकल वर्ग सर्ग मे जो है

सब कुछ बनाकर दृष्टि एक

मार्मिक-इतिहास-भिदी अद्वितीय

अत्यधिक निजी अनुशासन की सीमा थी

सदा एक नए समय की गर्म सास

अपनी-सी ही बहुत वह कला पिकासोई।[2]

शमशेर के यहॉ कला का अर्थ 'जीवन की तुला मे प्राणो का सयमन' है। क्योकि वे किसी भी कला को जीवन से बाहर नही देखते। उनके लिए जीवन ही सब कुछ है। कविता मे भाव तथा रग इसी जीवन से आयेगे। शमशेर की प्रवृत्ति बिम्बो के चाक्षुष रूप को पकड़ने की रही है। मुक्तिबोध ने शमशेर को इसीलिए 'इम्प्रेशनिस्ट चित्रकार' कहा था। वे लिखते है "शमशेर की मूलवृत्ति एक इम्प्रेशनिस्ट चित्रकार की है। इम्प्रेशनिस्ट चित्रकार अपने चित्र मे केवल उन अंशो को स्थान देगा जो उसके सवेदना-ज्ञान की दृष्टि से, प्रभावपूर्ण सकेत शक्ति रखते है। वह दृश्य चित्र मे उन्ही अशो को स्थान देता है जो उसके सवेदनाज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण, अत प्रगाढ़, प्रभावपूर्ण अंग है। केवल कुछ ही ब्रशेज मे वह अपना काम करके दृश्य के शेष अशो को दर्शक की कल्पना के भरोसे छोड़ देता है। दूसरे शब्दो मे, इम्प्रेशनिस्ट चित्रकार, दृश्य के सर्वाधिक सवेदनाघात करने वाले अंशों को प्रस्तुत करेगा और वह मानकर चलेगा कि यदि वह संवेदनाघात दर्शक के हृदय मे पहुँच गया तो दर्शक अचित्रित शेष अशो को अपनी सृजनशील

कल्पना द्वारा भर लेगा।

तथ्य यह है कि शमशेर ने अपने हृदय मे आसीन चित्रकार को पदच्युत कर उसके स्थान पर कवि को अधिष्ठित किया है। शमशेर वास्तविक भाव प्रसग मे उपस्थित सवेदनाओ का चित्रण करते है। वे लिखने को तो कविताए लिखते है, लेकिन उनकी कविताए धीरे-धीरे भावचित्रो का रूप ग्रहण करना प्रारभ कर देती है। इसका कारण यह है कि पदच्युत चित्रकार के जिस सिहासन पर कवि विराजमान है वह सिहासन अपनी जादुई शक्ति से कवि को बाध्य करता है कि वह इम्प्रेशनिस्ट टेकनीज और मनोवृत्ति अपनाए और इस प्रकार, इम्प्रेशनिस्ट चित्रकला के मूल नियमो को काव्यकला मे गुप्त रूप से सस्थापित करे।"[3]

शमशेर का मानसिक अवबोध चित्रकार की टेकनीक अपनाता है। एक चित्रकार की तरह वे अपने शब्दो मे रग भरते है। उनकी एक प्रसिद्ध कविता है 'होली रग और दिशाएँ'

जॅगले जालियॉ,

स्तभ

धूप के सगमर्मर के,

ठोस तम के।

कॅटीले तार हैं

गुलाब बाड़ियाँ।[4]

यह कविता एक एब्सट्रैक्ट पेटिंग के रूप मे अपनी समग्रता में पूरी उतरती है। शमशेर की कविताओ में सूक्ष्म सवेदनाओं के बिखरे गुणचित्रो को बिम्ब का रूप दिया गया है। उनकी

'घनीभूत पीड़ा' कविता मे शमशेर को अपने शब्द चित्रो से सतोष नही हुआ। उन्हे कविता के साथ रेखाकन देने की जरूरत भी महसूस हुई थी क्योकि उनका उद्देश्य उस 'घनीभूत पीडा' की पूर्णतम अभिव्यक्ति का था। शमशेर अक्सर अपनी कविताओ मे विभिन्न कला माध्यमों के बीच आवाजाही करते दिखाई पड़ते है।

शमशेर के चित्रकार होने का उनकी कविता पर यह प्रभाव पडा है कि उनकी कविता मे गाढ़े चटख और कई बार मद्धिम और उदास रगो वाले बिम्बो की सख्या अधिक है। उन्होने सगीत के प्रभाव को भी चित्रो मे ढालने की कोशिश की है। उनकी एक कविता है-

लुटी- मीठी बॉसुरी की धुन।

भूल सपनो की लिए बैठी

कौन चिलमन मे

मौन रिमझिम की,

ऑसुओ-लिपटी?

-फिर कहॉ वह मन-कली

ठुनकी, खिली, ठहरी, झुकी, मद-भार, अलसाई, गिरी,

खोई, कही सोई

मौन रिमझिम के

स्वप्न-चिलमन मे

बाँसुरी की धुन-सरीखी

(सुनी-जानी दुखों की सखि-सी

आत्मा की

लुटी मीठी मौन ध्वनि सी)[6]

इस कविता मे बॉसुरी की ध्वनि तरगो के उतार-चढ़ाव को शब्दो मे व्यजित करने की कोशिश की गई है। इस कविता मे नाद सौदर्य के साथ चित्रमयता भी है जो हमारा ध्यान तुरत आकृष्ट करता है। सगीत के प्रभाव की शब्दो के द्वारा चित्रमय प्रस्तुति इस कविता मे की गई है। इसी तरह की उनकी एक अन्य कविता है 'रेडियो पर एक योरोपीय सगीत सुनकर'-

मै

सुनूॅगा तेरी आवाज
पैरती बर्फ की सतह मे तीर-सी
शबनम की रातो मे
तारो की टूटती
गर्म
गर्म
शमशीर-सी-
तेरी आवाज
खाबो मे घूमती-झूमती
आहो की एक तसवीर सी. . [7]

इस कविता मे भी ध्वनि तरंगो को शब्द मे बाधने की कोशिश की गई है। इस कविता मे आह सिर्फ भाव नही बल्कि एक तस्वीर की तरह है। यह 'आह' इस कविता मे महसूस ही नही होती दिखती भी है।

असल मे शमशेर दृश्य जगत की उस लय की खोज मे है जो सर्वत्र विद्यमान है फिर भी हमसे कही खो जाती है। इसकी खोज मे उनमे विभिन्न कला माध्यम घुलमिल जाते है। उनकी एक कविता है 'विजय सोनी के चित्र'-

> और जहा मिलते है वह एक-
> कैनवस है
> जिसे हम छू नही सकते
> क्योकि उसे हम जी रहे है
> यह एक माध्यम है
> जिसे रग मिल-मिल के पकड़ने के लिए
> खोए जा रहे है
> यहॉ जो कुछ ठोस है
> वह धडक रहा है
> और जहॉ धड़कन है वहॉ
> खामोशी है
> दम साधे हुए।
> आज की चीख-पुकार मे
> एक बहुत कोमल तान
> खो गई है।
> उसे पाना है।[8]

शमशेर की कविता मे रगो और रेखाओ की परिणति उस बहुत कोमल तान को पा लेने मे है जो खो गई है। इसी मे उनकी कला की सार्थकता है।

# संदर्भ


1 कवियो का कवि शमशेर, रजना अरगडे से बातचीत, पृष्ठ 225

2 पिकासोई कला, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 156

3 शमशेर मेरी दृष्टि मे, मुक्तिबोध, शमशेर, पृष्ठ 12

4 प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 124

5 वही, पृष्ठ 116

6 उदिता अभिव्यक्ति का सघर्ष, पृष्ठ 77

7 कुछ कविताए, पृष्ठ 6

8 इतने पास अपने, पृष्ठ 35

# अध्याय : 4

## हिन्दी और उर्दू का दोआब

# हिन्दी और उर्दू का दोआब

मै हिन्दी और उर्दू का दोआब हूँ।
मै वह आईना हूँ, जिसमे आप है।[1]

शमशेर यहाँ सिर्फ दो भाषाओ के अद्वैत का ही स्वप्न नही देख रहे है बल्कि उन दो महान सस्कृतियो के मिलन का स्स्वप्न भी देख रहे है जो हजारो वर्षों के काल प्रवाह मे घुलमिल कर एक हो गई है। इनमे से एक को भी हटा कर हमारी सच्ची तस्वीर नही बन सकती। हिन्दी और उर्दू की बाते शमशेर के लिए 'वो अपनो की बाते, वो अपनो की खू-बू' है। इसीलिए शमशेर हमारे लिए उस आईने की तरह है जिसमे हम अपनी सच्ची तस्वीर देख सकते है। यह आईना क्या हो सकते है इसे हम उनके 'दोआब' मे सकलित निबन्ध 'मुसद्दस' और 'भारत-भारती' की सास्कृतिक भूमिका' को पढ़कर जान सकते है। क्योकि ये "दोनो मिलकर हमारी आज की जातिगत राष्ट्रीय भावनाओ की भूमिका प्रस्तुत करती है। दोनो मे हमारी सस्कृति के मुख्य आधारो का परिचय देने का प्रयत्न किया गया है 'मुसद्दस' मे मुस्लिम सस्कृति का, 'भारत भारती' मे हिन्दू सस्कृति का' इन दोनो कविताओ मे कवियो ने बहुत कठिन जिम्मेदारी अपने ऊपर ली और उसे शक्ति भर निभाया। उन्होने लोकप्रिय काव्य-रूप मे जातीय इतिहास का मूल्याकन, 'वर्तमान' का सच्चा वर्णन, और भविष्य के लिए स्पष्ट कर्तव्य निर्देश हमें दिया।"[2]

शमशेर का मानना है कि हिन्दू तथा मुस्लिम सस्कृतियाँ हमारी साझा संस्कृति का मूलाधार हैं। इन आधारो की सच्ची खोज तथा मूल्यांकन हमारे युग की मांग है। इस युग की

व्याख्या करते हुये शमशेर जी ने उसी निबध मे लिखा था "आज फिर अनेक समस्याओ से गुथने, उन्हे सुलझाने का सघर्षमय युग आ उपस्थित हुआ है, अब जातीय गौरव-गाथाएँ रण-भेरियॉ सी बन गयी है। सर्वजन-साधारण, मजदूर-किसान, विद्यार्थी, स्त्री-वर्ग, नेता, विचारक, लेखक, कलाकार- सभी समाजो, समूहो- धर्मो, जातियो, वर्गो के लोग, सभी अपने-अपने दृष्टिकोण से आज की अवस्था को समझने और समझाने मे दिलचस्पी ले रहे है, अस्तु, आज दूसरे विश्वव्यापी महाभारत के बाद जब सयुक्त लोक-शक्ति फासिज्म को अन्तिम नही, तो निर्णायक रूप से अवश्य ही हटा चुकी है, जब 'राष्टीयता' की विभिन्न परिभाषाए देशविदेश मे प्रचलित है, और स्वाधीनता, 'देश', 'जाति', 'धर्म', 'वर्ग', 'शासन', 'जन-अधिकार', आदि के वास्तविक रूप और उनकी यथार्थ सीमाए अतरराष्ट्रीय परिस्थितियो के अनुसार रोज-रोज निर्धारित और नियोजित होती है, और इस घनीभूत विषमता के विरोध मे सभी देशो के दलित और अपहृत वर्ग सगठित मोर्चा बनाने लगे हैं, ऐसे समय मे हमे क्या कुछ आवश्यकता नही है अपनी स्वस्थ परम्पराओ को उनके सच्चे रूप मे समझने की, उनसे शक्ति, स्वास्थ्य और प्रेरणा लेने की, अपने भविष्य निर्माण मे उनसे आवश्यक सहायता और योग प्राप्त करने की?[3] शमशेर 'मुसद्दस' तथा 'भारत-भारती' की रचना को इस प्रयास की एक कड़ी मानते हैं। 'मुसद्दस' तथा 'भारत-भारती' उनके लिए सिर्फ मुस्लिम तथा हिन्दू सस्कृतियो की आशाओं और आकांक्षाओ के केन्द्र नही रह जाते बल्कि सयुक्त उपक्रम मे वे एक साझा भारतीय सस्कृति के निर्माण की भूमिका तैयार करते प्रतीत होते हैं। यह संस्कृति सिर्फ हिन्दुओं या मुसलमानों की संस्कृति नहीं है बल्कि एक सच्ची भारतीय संस्कृति है।

डॉ रामविलास शर्मा 'दोआब' के दूसरे सस्करण की भूमिका मे लिखते है "लेकिन हिन्दी-उर्दू के प्रगतिशील लेखको मे और बहुत से कम्युनिस्ट नेताओ मे यह विचारधारा बहुत गहराई से जड जमाये हुए है कि देश मे हिन्दुओ की एक सस्कृति है, मुसलमानो की दूसरी। यह विचारधारा काफी खुले रूप मे सन् 47 के आस-पास प्रकट की जाती थी। शमशेर के निबन्धो पर इस विचारधारा का असर जहॉ-तहॉ दिखाई देते है। इसी भूमिका मे एक जगह उन्होने शमशेर के इकबाल' प्रेम को लक्ष्य करके लिखा है "हिन्दी के सभी कवियो के मुकाबले शमशेर को इकबाल पसन्द हो, इस पर मुझे आपत्ति नही जब तक इकबाल की उर्दू कविता को वह उसी जाति के साहित्य का अग समझे जिसने हिन्दी साहित्य रचा है।"[5] डॉ रामविलास शर्मा के आदर्श अपनी जगह और यह प्रश्न अपनी जगह की एक जातीयता का आग्रह, एक समान वेषभूषा, एक समान खानपान, एक समान बोली-बानी से होते हुए क्या एक समान धर्म और एक समान विचारधारा के अंध हिन्दू राष्ट्रवाद के दुराग्रह मे नही पर्यवसित हो जाता है ? डॉ रामविलास शर्मा के अनुसार "हिन्दू धर्म या इस्लाम का नाम लेने से या उनसे प्रभावित होने से किसी कवि की रचना जातीय सस्कृति से खारिज नही हो जाती। . . लेकिन इकबाल ने धर्म के आधार पर देश के विभाजन की माग की। .. इकबाल ने राष्ट्रीय एकता की जमीन छोड़कर साम्प्रदायिक संकीर्णता का रास्ता अपनाया था।"[6] लेकिन शमशेर जी का मानना है कि "देश-प्रेम के लोकप्रिय तरानों का स्थान इकबाल की बाद की कविता में इस्लामी धर्म से अभिभावित एक व्यापक प्रकार के आदर्शवाद ने ले लिया जिसमे इस्लामी दुनिया का सांस्कृतिक और धार्मिक सगठन का भाव अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गया है। वास्तव मे स्वदेश प्रेम से ऊपर

उठकर इकबाल ने अपने धर्मानुयाइयो को जिस आदर्श की ओर प्रेरित किया है, उसे हम अनुदार कदापि नही कह सकते, क्योकि इकबाल के 'मुस्लिम' की व्याख्या करने पर हम उसे ससार समाज का एक आदर्श व्यक्ति पाते है।"[7]

अतत डॉ रामविलास शर्मा भी स्वीकार करते है कि "निबन्धो की यह पुस्तक उन थोडी-सी किताबो मे है जिनमे हिन्दी-उर्दू साहित्य की सस्याओ पर एक जगह विचार किया गया है।"[8]

हिन्दी-उर्दू विवाद शमशेर के लिए कोई मायने नही रखता क्योकि उनके अपने सस्कार उर्दू मे रचे बसे हुये है। अपने इन सस्कारो के प्रति गहरी कृतज्ञता व्यक्त करते हुये वे कहते है "आज एक बात के लिये मै अपने पॅछोही, सीधे-साधे जाट परिवार और अपने बचपन के युग को धन्यवाद देता हूँ कि किसी भाषा को लेकर कभी कोई दीवार मेरे चारो तरफ खड़ी न हो सकी। जो मेरे हृदय या मस्तिष्क को घेर लेती।"[9]

भाषा को लेकर यह सतर्कता उनमे हिन्दी-उर्दू विवाद के बढ़ने के साथ ही बढ़ती गयी है। वे भाषा को खुला आकाश देना चाहते हैं और इसी तरह अपनी अभिव्यक्ति को भी। वे उर्दू को हिन्दी का ही एक रूप मानते है। उर्दू और हिन्दी का यह मिलाजुला रूप उनकी अभिव्यक्ति को अधिक असरदार बनाता है। उनका मानना है कि "एक-दूसरे के वैभव से समृद्ध होने के अलावा और दूसरी एक चीज की हमारी व्यवहृत वाणी को आवश्यकता है, और वह है उस बुनियादी भाषा की, जिसकी खोज हमे गांव-गाव के शब्दो और महावरों में, कौम-कौम के रीति-रिवाजो के गीत-साहित्य मे, और उनके जीवन के सुख-दुख, हास-रुदन के भाव सम्बल में करनी होगी।"[10]

भाषा लोगो द्वारा प्रयोग की जाती है। इसलिए कलाकार को इस जनभाषा की खोज ही करनी चाहिए। कृत्रिमता अभिव्यक्ति के लिए सबसे बडा खतरा है। "सादगी और पुरकारी" इसी जनभाषा की सिद्धि से ही प्राप्त हो सकती है। तभी हम अपने लोगो की भावनाओ, उनके सुखो-दु खो को पहचान कर उनकी अभिव्यक्ति कर पायेगे।

शमशेर हिन्दी और उर्दू के बीच बढ़ती दूरी को शुभ नही मानते और चितित होते है। यह विभाजन इतना भीषण है कि ये दोनो भाषाये लगभग दो धर्मो, सस्कृतियो की भाषाओ के रूप मे पहचानी जाने लगी है। जबकि शमशेर जैसे सवेदनशील कवि का मानना है कि "आज एक उत्तरदायी कवि के समक्ष भारतीय सस्कृति केवल हिन्दू या मुसलमान संस्कृति नही है।"[11]

वे मानते है कि उर्दू असल मे "हमारी हिन्दी का ही रूप है, कितना ही "अवैदिक" सही।"[12] इसीलिए शमशेर उर्दू को हमारी भाषाई समृद्धि का एक उपकरण मानते है। वे चाहते है कि लोग "यह देखे कि किस प्रकार वह योग प्राप्त हो जो हम अपने ही घर में गड़ा हुआ धन खोज और निकाल कर अपने काम मे ला सके? केवल शब्दो को रेल-मेल लेने से नही, कुछ अनोखे भावो का पैबन्द लगा लेने से नही, बल्कि दोनो प्रमुख सस्कृतियो के इतिहास, धर्म, कला और साहित्य के एक साथ अध्ययन की शुरु से ही अनिवार्य और व्यापक व्यवस्था करने से ही वह मौलिक सरसता, आधारभूत सौंदर्य की वह ग्रहण शक्ति पैदा हो सकती है जो कवि-कृतियो मे इस युग को सफल बनायेगी।"[13]

शमशेर को भावों और संस्कारों का योग विरासत में मिला था। वह युगीन परिस्थितियों

की देन था। भाषाओ और व्यक्तियो के बीच की वह दूरिया तब नही थी। शमशेर के उस पूरे व्यक्तित्व पर जिसे हम अक्सर 'शमशेरियत' के नाम से अभिहित करते है इस योग का अमिट असर है। फारसी और उर्दू के इस साहित्यिक सस्कार को हटाकर हम उनकी कविता को समझने मे कभी सफल नही हो सकते। युवा कवि देवी प्रसाद मिश्र ने सही लिखा है कि "उनकी कविता सूफियाना नीम-होशी की कविता है।"[14] उनका यह भी मानना है कि "शमशेर उस तहजीब की बहुत विश्वसनीय नुमाइदगी करते थे, जहा हिंदी और उर्दू भारतीय सस्कृति के दो विरोधी नही, सपूरक तत्व है।"[15] अपनी इन्ही विशेषताओ के चलते शमशेर भारतीय नवजागरण के सच्चे प्रतिनिधि के रूप मे हमारे सामने आते है। वे जब लिखते है–

मै एक नज्म हू/एक दोहा हूँ।[16]

तो बात सिर्फ दो प्रकार के छन्दो की ही नही है। असल बात है उस रचाव-बसाव की जो दो सस्कृतियो ने सैकड़ो सालो में साथ रहकर अर्जित किया है। यह सास्कृतिक रचाव-बसाव उनकी कविताओ मे प्राण की तरह बसा हुआ है। वही भाषा और भाव की लय, वही प्रेम का सौंदर्य मूलक चित्रण, वही सूफियाना प्रेमोन्माद, शमशेर की कविताए पढ़ते हुए हम जिस तन्मयता मे डूब जाते हैं वह फारसी उर्दू गजल परपरा की देन लगती है। ग़ज़ल मे "कवि एक ही भाव मे दिमाग को नही उलझाता। रग-रग के भाव-चित्रो मे प्रेम और सौंदर्य की बहार दिखाकर कवि अपनी सुरुचि और रस मर्मज्ञता का प्रमाण देते है। किसी विषय की व्याख्या करने का इसमें अवकाश नही। एक मार्मिक संकेत और बस, दूसरा मार्मिक सकेत और बस।"[17] शमशेर के इस वक्तव्य के साथ उनकी कविता का सौंदर्य देखिये–

ठड भी एक मुस्कुराहट लिए हुए है

जो कि मेरी दोस्त है।

कबूतरो ने एक गजल गुनगुनाई

मै समझ न सका, रदीफ'काफिए क्या थे,

इतना खफीफ, इतना हलका, इतना मीठा

उनका दर्द था।

आसमान मे गगा की रेत आइने की तरह हिल रही है।

मै उसी मे कीचड़ की तरह सो रहा हूँ

और चमक रहा हूँ कही

न जाने कहाँ।[18]

डॉ नामवर सिह ने सही लक्ष्य किया है "उर्दू हिन्दी के इस 'दोआब' की कविताओ मे 'आईना' अकसर आता है। हिन्दी के किसी कवि मे 'आईना' की इतनी पूछ नही। शमशेर के काव्य लोक मे घूमते हुए लगता है कि "आईना खाने मे कोई लिए जाता है मुझे।" यह आईना हैरान होता नही, हैरान करता है। यह स्तेधाल का "शहर मे घूमता आईना" नही है, यह कवि की चमकती हुई तरल-तरल आँख की पुतली है जिसमे सारी कायनात बद है।"[3]

शमशेर के इस 'आइने' मे प्रतिबिंबित कायनात मे–

सब सस्कृतियाँ मेरे सरगम मे विभोर हैं-

क्योंकि मैं हृदय की सच्ची सुख-शांति का राग हूँ

बहुत आदिम, बहुत अभिनव[20]

यह आदिम और अभिनव राग ही इसानियत का राग है। लेकिन उसे पाना इतना आसान कहॉ? बकौल गालिब 'आदमी को भी मुयस्सर नही इसा होना? इसी इसान की खोज शमशेर करते है। इसीलिए उनके 'आईने' मे हमे अपनी शक्ल ज्यादा विश्वसनीय ढग से दिखाई पडती है। उनका 'आईना' सच्चा है। हिन्दी और उर्दू का दोआब तो वह है ही।

**सन्दर्भ :**


1 बाढ़ 1948, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 80

2 मुसद्दस और भारत भारती की सास्कृतिक भूमिका, दोआब पृष्ठ 9

3 वही, पृष्ठ 25

4 अच्छे गद्य की पहचान, डॉ  रामविलास शर्मा, शमशेर पृष्ठ 61

5 वही, पृष्ठ 61

6 वही, पृष्ठ 61

7 इकबाल की कविता, दोआब पृष्ठ 131

8 अच्छे गद्य की पहचान, डॉ. शर्मा, शमशेर पृष्ठ 66

9 मैं हिन्दी मे कैसे आया, कुछ और गद्य रचनाएं, पृष्ठ 100

10 उर्दू कविता, दोआब, पृष्ठ 110

11 वही, पृष्ठ 1110

12 वही पृष्ठ 111

13 वही,

14 मै वह आईना हूँ जिसमे आप है, देवी प्रसाद मिश्र आजकल शमशेर अक, पृष्ठ 49

15 वही, पृष्ठ 50

16 बाढ़ 1948, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 80

17 दोआब, पृष्ठ 115

18 टूटी हुई, बिखरी हुई, प्रतिनिधि कविताएं, पृष्ठ 108

19 डॉ नामवर सिह, भूमिका, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 6

20 अमन का राग, प्रतिनिधि कविताए, पृष्ठ 92

# परिशिष्ट – I

अजय सिह से बातचीत

# श्री अजय सिंह से बातचीत

28 दिसम्बर 1995 की सुबह। समय प्राय 10 से 11 बजे की बीच। लखनऊ की पत्रकार कालोनी मे श्री अजय सिह का आवास। मै उनसे कवि शमशेर के बारे मे जानने गया था। अजय सिह के परिवार मे शमशेर जी काफी दिन रहे थे। अजय जी की पत्नी शोभा जी के परिवार से भी शमशेर जी का पारिवारिक नाता रहा। शोभा जी बहुत छोटी थी तभी से उन्होने ताऊ जी (शमशेर जी) को देखा था। शमशेर जी के व्यक्तित्व की किन्ही गहराइयो मे उतरने की कुँजी शायद मिले इस स्वार्थ मे मै उन लोगो से बात करने गया था। शोभा जी से बात नही हो पाई। वे और उनकी बेटी भाषा दोनो ही किसी आवश्यक मीटिंग के लिए निकल ही रही थी। अजय जी पकड मे आ गए। उन्होने शमशेर जी के बारे मे विस्तार से बाते की।

अजय जी ने बताया कि शमशेर जी मुझे और शोभा को बेटी और दामाद की तरह मानते थे। परिचय भी इसी तरह कराते थे। शोभा को बेटी के तौर पर मानते थे। बहुत जुड़ाव और निकटता रही। मुझसे मिलने से पहले से ही उनका शोभा और उनके परिवार से सम्बन्ध था। शमशेर जी 1964-65 मे दिल्ली गए थे। इलाहाबाद से। शमशेर से मेरा सपर्क 1969 मे दिल्ली मे हुआ। 1969 साल के आखिरी दिन। 1 जनवरी 1970 से हम लोग साथ रहने लगे लाजपत नगर मे। जब मै मिला था तब शमशेर डिफेस कालोनी मे रहते थे। वहाँ से शिफ्ट करने की तैयारी कर रहे थे। मैने भी पैकिंग मे हाथ बटाया। 31 दिसम्बर 1969 को शिफ्ट किया था। 31 दिसम्बर 1969 को शिफ्ट किया था। 1 जनवरी 1970 से लेकर 1980-81 तक हमलोग बराबर साथ रहे। शुरू में दयानंद कालोनी लाजपत नगर और 1977 मे हम लोग माडल टाउन

मे शिफ्ट कर गए थे। 1980-81 मे मै लखनऊ अमृत प्रभात मे चला आया। शोभा और बच्चे वही दिल्ली मे थे। बाद मे 1981 मे शमशेर उज्जैन प्रेमचद सृजनपीठ के आचार्य होकर चले गए। जब उज्जैन चले गए और बच्चे लखनऊ चले आए हम लोग बराबर उज्जैन जाते रहे। फिर जब वे गुजरात सुरेन्द्र नगर चले गए तो वहॉ भी हम सपरिवार जाते रहे। 80-81 के बाद परिवार के लोग नौकरी या कामकाज से बाहर चले जाते है उसी तरह का अलगाव था। लखनऊ शमशेर जी आते रहते थे। जून 1990 मे हम लोग उनसे मिलने बडौदा गए थे। उसके बाद हम लोग जाने की सोचते रहे लेकिन जा नही पाए। आशकाओ के बावजूद चाहने के बाद भी नही जा पाए। 1970-1980-81 तक एक ही छत के नीचे साथ-साथ और उसके बाद 1993 तक आना-जाना, चिट्ठी-पत्री, भावात्मक मेलजोल और मानसिक तौर पर सम्बन्ध बना रहा। हालाकि कभी मै शमशेर के बारे मे अपने परिचय जैसे वो मेरे ससुर है पसद नही करता रहा। मै भी उन्हे ताऊ जी कहता था। एक तरह की समझदारी थी हममे कि जब साहित्यिक-राजनैतिक बात होगी तो मै उन्हे शमशेर जी कहता था। पारिवारिक वातावरण मे ताऊ जी कहता था। हम लोगो का उनसे बहुत ही घनिष्ठ पारिवारिक और गहरा सम्बन्ध रहा। शोभा का परिचय इलाहाबाद से ही था। शोभा ने जब से होश सभाला होगा तब से वो शमशेर को देख रही होगी। शमशेर जी और शोभा का सम्बन्ध जो रहा उसी मे मैं शरीक हो गया।

सहज और सरल व्यक्तित्व था उनका। निश्छल और निष्कपट व्यक्ति थे जिसमे कोई दुर्भावना या विद्वेष नही था। परिवार में हर चीज खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने में शमशेर जी की पूरी कोशिश रहती थी कि अपने से ज्यादा दूसरों को मिले। उनकी बराबर कोशिश रहती थी

कि उनके साथ शेयर करने वाले लोगो को ज्यादा मिले। गुस्सा तो उनको आता था। कभी मुझ पर, कभी शोभा पर, कभी बच्चो पर। नाराजगी मे खामोशी हो जाती थी। तुनकमिजाज नही थे। लेकिन हर चीज मे नफासत और सलीका हो, सुरूचि हो, तहजीब हो, गवारूपन और अभद्रता न हो, बेशऊरी न हो यह तो उनका गुण था। चाहे अपना गुस्सा हो या प्रेम मद कथन (Under Statement) उनका गुण था। यानि शब्दो या भाव भगिमाओ के कम से कम इस्तेमाल के जरिए अपनी बात या अपने भाव व्यक्त करना उनकी सिफत थी। यह चीज उनकी कविता तथा व्यक्तित्व मे झलकती है।

जब शमशेर जी दिल्ली चले गए तब वह परिस्थितिया नही रही जो जस्टफिट मे थी। दिल्ली मे मलयज का परिवार साथ मे था। उसमे उस तरह की प्राइवेसी (Privacy) नही थी। 1964-65 मे शुरू मे शमशेर जी दिल्ली गए और मलयज के साथ रहने लगे। मुक्तिबोध की मृत्यु के समय प्रभाकर माचवे के साथ दिल्ली मे रहे थे। 'चाँद का मुह टेढ़ा है' सग्रह की भूमिका वहॉ ही लिखी थी। माडल टाउन मे रहते हुए शमशेर जी का कमरा अलग था। चूकि वे दिल्ली वि वि मे हिन्दी-उर्दू प्रोजेक्ट पर काम भी कर रहे थे अत वि. वि आना-जाना होता ही था। परिवार के साथ रहते हुए भी उन्हे एकात मिल जाता था। शमशेर जी अपनी रचना प्रक्रिया या कैसे वो लिखते या सोचते हैं इस बारे मे बात करना पसद नही करते थे। वे इस बारे मे सकोची थे। लाजपतनगर मे बरसाती थी जिसमे हम रहते थे। इससे ज्यादा हम वहन नहीं कर सकते थे। एक-दो कमरे का घर था। किन्तु शमशेर जी का जो अपना रचना-संसार है वो चलता रहा। वहाँ तो उस तरह का एकांत नही था लेकिन उनमें यह सिफत था कि जब वो कुछ लिखने या सोचने

बैठ जाते थे तो तन्मय हो जाते थे। बाहर का कोलाहल उन्हे डिस्टर्ब (Disturb) नही करता था। भीतर के कोलाहल मे गुम हो जाते थे। उस दौर मे रहते हुए भी उन्होने उर्दू पाठमाला 'दिनमान' मे लिखी। (हिन्दी पाठको को उर्दू सिखाने के लिए हर हफ्ते एक पाठ लिखते रहे। यह बहुत ही विलक्षण था और लगभग एक साल तक 'दिनमान' मे चला और बहुत ही लोकप्रिय हुआ।) परिवार मे रहते हुए उन्होने यह लिखा। 1970 बाद के दशक मे दगो पर 'घर की पाती वसता के नाम' वही लिखी गयी। उनकी अपनी जो रचना प्रक्रिया थी कई दिक्कतो के बावजूद रचना के लिए समय निकाल ही लेते थे और मेहनत और समय भी बराबर देते थे। 'शोभा के लिए' 'मोहन राकेश', 'बैल', 'अफ्रीका कम बैक' कविताए वही लिखी गई। अपनी पुरानी रचनाओ को ढूढकर छपने-छपाने के लिए तैयार करना वही किया। 1970 के बाद पुस्तको के आने का क्रम बढ़ जाता है। रचना और प्रकाशन की दृष्टि से और अपने रचनाकार व्यक्तित्व को विकसित और अधिक प्रौढ़ रूप मे प्रस्तुत करने का यही दौर है। काफी उर्वर दौर रहा है। इससे यह लगता है कि उनकी रचना प्रक्रिया इस जीवन के दूसरे दौर की जो भी जटिलताए या अपेक्षाए रही शमशेर ने उनको काफी हद तक पूरा किया है।

सवेदनशील थे, भावुक नही थे। रंजना ने जो शमशेर पर फिल्म बनायी थी उसकी समीक्षा जनमत मे मैने की थी। शमशेर को जो लोग अकेले अपने मे लड़ता, टूटता और छीजता हुआ भावुक, असहाय इस तरह पेश करते हैं उनसे मैं सहमत नहीं हूँ। सहानुभूति, करूणा पैदा करने का लोगों का नजरिया रहा है, मैं समझता हूँ यह शमशेर का वस्तुपरक मूल्याकन नही है, और न ही सही नजरिया है।शमशेर का अपना स्वतंत्र जीवन रहा है और जिसे उन्होंने सही

समझा और जैसा चाहा उस रूप मे अपने जीवन को जिया और स्वतत्र, आत्मनिर्भर, आत्मसम्मान से भरा हुआ परिपूर्ण जीवन जिया। शमशेर ने न किसी पर कभी दया की न उन्हे किसी की दया की दरकार रही। स्वतत्रता, समानता और परस्पर सम्मान इन बिन्दुओ पर आधारित उनका जीवन रहा। परस्पर सम्बन्ध मे भी चाहे निजी जीवन हो या साहित्यिक, सास्कृतिक जीवन, इन्ही मूल्यो को तरजीह देते रहे। परिवार या जीवन के बारे मे जो पारपरिक मूल्य रहे है शमशेर ने उन्हे भी स्वीकार नही किया। प्रेम, सहजीवन, परिवार इन सब के बारे मे उनकी अवधारणा ही अलग थी। हालाकि इन सबको उन्होने अलग से व्याख्यायित नही किया। पारपरिक अर्थ मे उनका कोई परिवार नही है। एक-दूसरे से रक्त सम्बन्ध ही उनके परिवार का आधार नही था। उन्होने हमेशा नए-नए परिवार बनाए। चाहे इलाहाबाद हो चाहे दिल्ली मे। इसलिए उन्हे जो लोग असहाय चित्रित करते है उनका पूरा नजरिया मार्क्सवादी या द्वन्द्ववादी पद्धति से अलग है और वस्तुपरक नही है। 'टूटी हुई बिखरी हुई' कविता मे "तुम मुझसे प्रेम करो मछलियॉ जैसे लहरो से करती है जिनमे वह फसने नही आती" या अन्य कविताओ मे सम्बन्धो के बारे मे जो उनका कास्प्ट (Concept) विकसित होता है वह समानता, स्वतत्रता और बराबरी का दृष्टिकोण है। एक-दूसरे के स्वतत्र व्यक्तित्व पर निर्भर होके उन्होने अपने सम्बन्ध बनाए थे। उनके जीवन और रचनाओ मे यह दिखता है। परिवार या सम्बन्ध के बारे मे उनकी अवधारणा ही दूसरी थी। पारपरिक मूल्य या मान्यता की दृष्टि से जो उनके जीवन को देखते है उन्हे उनका जीवन खण्डहर की तरह दिखेगा। किन्तु उनका जीवन विविधतापूर्ण और अच्छा रहा है इसलिए उनसे मिलने वाले लोग समृद्ध हुए है। इतने सालो में उन्होने अपने जीवन की निरूपायता, अकेलेपन की बात कभी नही की।

रविन्द्र ठाकुर, गालिब, मीर आदि उनके प्रिय कवि है। पाब्लो नेरूदा और ब्रेख्त के भी वो कायल है। हालाकि वो यह भी कहते रहे कि मेरा अध्ययन बहुत ज्यादा नही है। यह उनकी विनम्रता है। शमशेर अपने रचनाकार के लिए जिनको मानते रहे है उनका उन्होने गहरा अध्ययन किया है। शमशेर की विशेषता यह रही है कि डिकेडेन्स कवियो से भी अपने लिए काम की बात निकाल लेते थे, सीखते थे। सीखने के लिए बराबर आतुर रहते थे। चाहे नई भाषा हो या नया शिल्प हो। नौसिखिया कवियो को भी पूरी गभीरता से राय देते थे। कोई व्यक्ति कवि है यही उनको आकृष्ट करता था। वे यह समझने की कोशिश करते थे कि किस बात ने इस व्यक्ति को कवि बनाया। जितने भी वाद चले कविता मे, घनवाद (Cubism) या अन्य सब उन्हे आकृष्ट करते थे। यहॉ तक कि चित्रकारो के नए आदोलनो पर भी उनकी दृष्टि रहती थी। 'अमन का राग' कविता है, दुनिया मे जो भी समृद्ध और महान है वह हम सबका है उससे हमे जुडना चाहिए। ससार के महान कवि है और उनकी रचना प्रक्रिया को समझा जाय यही बात उनको आकृष्ट करती थी।

शमशेर का मूल्याकन आलोचनात्मक नजरिए से होना चाहिए। व्यक्ति पूजा या स्तुतिगान न हो। वस्तुपरक मूल्याकन हो।

भैरव प्रसाद गुप्त जी के साथ विवाद के बारे मे उन्होंने कहा कि शमशेर जी समय को लेट होने पर ओवर टाइम करके कम्पेनसेट करते थे। अजय सिंह ने बताया कि दिल्ली वि. वि मे जब काम करते थे अक्सर रात 9 बजे के बाद लौटते थे। उनमें आत्म सम्मान और स्वाभिमान गजब का था। कही भी दैन्य नहीं था।

जब मै शमशेर से मिला तब उनके महत्व के आकलन का दौर नए सिरे से चल रहा था। उस दौर मे बहुत से प्रगतिशील कवियो पर चर्चा शुरू होती है। नागार्जुन, केदार आदि। नक्सलबाडी की घटना ने हिन्दी के साहित्यिक, सास्कृतिक परिवेश पर गहरा असर डाला। यह प्रगतिशील कवियो के आकलन का नया दौर नक्सलबाड़ी के प्रभाव मे होता है। उसी दौर मे शमशेर से मेरा परिचय हुआ था। 1971 मे जब शमशेर 60 वर्ष के हुए थे तब षष्ठपूर्ति मनायी गयी थी बडे पैमाने पर। उसमे दिल्ली के जो भी कवि, लेखक, पत्रकार, सगीत, नृत्य की दुनिया से जुडे लोग थे शामिल हुए थे। 1970 के बाद वाले दशक से उनके महत्व के आकलन का दौर शुरू होता है।

वे अपनी ताजी कविताओ को सुनाते थे। औपचारिक कवितापाठ के अलावा घरेलू वातावरण मे कविता नही सुनाते थे। कभी प्रतिक्रिया नही मागते थे। पक्च्यूशन, स्पेस आदि पर काफी मशक्कत करते थे। बहुत Prolific wnter नही थे। ताबडतोड़ लिखने वाले। लेकिन जो जरूरी था उसे लिखते थे। दो-तीन घटे मे शमशेर जी ने मुझे उर्दू सिखा कर इस लायक बना दिया कि बच्चो के लिए प्रेमचंद की बालपोथी 'रामकथा' पढने लगा। उस रामकथा मे राम के जन्म पर तोप छूटने का जिक्र है उसमे हम लोग हसे थे। उर्दू की सरलता के बारे में बात करते थे।

## परिशिष्ट – II

### शोध प्रबन्ध मे सदर्भित कुछ कविताए और एक असकलित कविता

## परिशिष्ट : दो

शोध प्रबन्ध मे सदर्भित कुछ कविताए और एक असकलित कविता

# एक पीली शाम

एक पीली शाम

पतझर का जरा अटका हुआ पत्ता शान्त

मेरी भावनाओ मे तुम्हारा मुखकमल

कृश म्लान हारा-सा

(कि मै हूँ वह

मौन दर्पण मे तुम्हारे कही?)

वासना डूबी

शिथिल पल मे

स्नेह काजल मे

लिये अद्भुत रूप-कोमलता

अब गिरा अब गिरा वह अटका हुआ ऑसू

सान्ध्य तारक-सा

अतल मे।

# एक नीला आइना बेठोस

एक नीला आइना
        बेठोस-सी यह चॉदनी
और अन्दर चल रहा हूँ मै
        उसी के महातल के मौन मे।
मौन मै इतिहास का
        कन किरन जीवित, एक, बस।

एक पल के ओट मे है कुल जहान।

आत्मा है
अखिल की हठ-सी।
        चॉदनी मे घुल गये है
        बहुत-से तारे        बहुत कुछ
        घुल गया हूँ मै
        बहुत कुछ अब।
                रह गया सा एक सीधा बिंब
                चल रहा है जो
                शान्त इगित-सा
                न जाने किधर

# सारनाथ की एक शाम

**(त्रिलोचन के लिए)**

ये आकाश के सरगम
    खनिज रग है
बहुमूल्य अतीत है
    या शायद भविष्य।1।
तू किस
    गहरे सागर के नीचे
        के गहरे सागर
            के नीचे का
        गहरा सागर होकर
भिच गया है
अथाह शिला से      केवल
अनिद्य अवर्ण्य मछलियो के विद्युत
तुझे खनते है
अपने सुख के लिए।2।
        (सुख तो व्यग्य मे ही है
                और कहॉ
        युग दर्शन
            मित्र
        छल का अपना ही
                छन्द है
            सर्वोपरि मधुर मुक्त
                और कितना एब्स्ट्रैक्ट
क्योकि व्यभिचार ही आधुनिकतम
काव्य कला है      और      आज
आलोचना के डाक्टर
उसे अनादि भी कहते हैं) ।3।

शब्द का परिष्कार
स्वय दिशा है
वही मेरी आत्मा हो
ऑधी दूर तक
तब भी
तू बहुत दूर है बहुत आगे
त्रिलोचन।4।

वह कोलाहल जो कोपलो मे भरा है
सुनकर
तू विक्षुब्ध हो-हो जाता
क्या उपनिषदो का शोर
उसे दबा पाता।5।

वरूणा के किनारे एक चक्रस्तूप है
शायद वही विश्व का केन्द्र है
वही कही
ऐसा सुनते है।6।

आधुनिकता    आधुनिकता
डूब रही है    महासागर मे
किसी कोपल के ओठ पे
उभरी ओस के    महासागर मे
डूब रही है
तो फिर क्षुब्ध क्यो है तू।7।

x x x

तूने शताब्दियो
सानेट से मुक्त छन्द खन कर
सस्कृत वृत्तो मे उन्हे बाँधा    सहज हो लगभग
जैसे य' आकाश बँधे हुए हैं अपने
सरगम के अट्टहास में।8।

ओ
शक्ति के साधक अर्थ के साधक
तू धरती को दोनो ओर से
थामे हुए और
ऑख मीचे हुए ऐसे ही सूँघ रहा है उसे
जाने कब से।9।

तुझे केवल मै जानता हूँ।10।

क्योकि
मै उसी धरती मे लोट रहा हूँ उसकी
ऋतुओ की पलको-सा बिछा हुआ मै
उसकी ऊष्मा मे
सुलग रहा हूँ
शान्ति के लिए।11।

एक वासन्ती सोम झलक जो मेरे
अक से छीन कर चाँद लुका लेता है
खीच ले जाती है प्राण मेरा
उस पर भी है तेरी दृष्टि। ।12।

आन्तरिक एकान्त
वरूणा किनारे की वह पद्म
ऊष्मा।13।

# एक नीला दरिया बरस रहा

एक नीला दरिया बरस रहा है
और बहुत चौड़ी हवाएँ है
मकानात है मैदान
किस कदर ऊबड-खाबड़
मगर
एक दरिया
और हवाएँ
मेरे सीने मे गूँज रही हैं।

एक रोमान
जो कही नही है मगर जो मै
हूँ हूँ
एक गूँज ऊबड-खाबड
लगातार
आँख जो कि अँखुआ
आयी हो बहुत ही करीब बहुत
ही करीब।

(2)

एक सुतून
फिर हुआ खडा
वही
जहाँ कि वह शुरू से था खड़ा
एक जुनून
जो कि महज नाम था
फिर हुआ
जुनून
सब तुके एक हैं
यानी कि मेरा
ख़ून।

अजब बेअदबी है जमाने की– कि
कि
अक्स है इन्तिहाई गहरा
वही दरिया
और वो मुझे ले गया डुबा
जहॉ इन्तिहाई गहराइयो के सिवा
और कुछ न था
एक इन्तिहाइयत हाइयत
जो कि महज महज महज
मैं हूँ–और
कुछ नही
यहॉ।

(3)

मगर
मेरी पसली मे है-गिन लो
व्यजन और उनके बीच मे है
स्वर
उसे मेरा ही कहो–फिलहाल
(अहा, तुम कितने अच्छे हो कि मूर्ख हो-महात्मा मूर्ख
–इस जमाने के स्वॉग मे उतरे हुए
एक आदिमतम देवता स्थिरतम ।)
नही नही नही
वह
स्वर

एक ही हाथ बाये आकाश को उठाये हुए है
एक गोल गति इक् करोड़ लाख बार घूम घूम
कर
मुझे लील जाती है
समूचा
अथाहो के दरिया मे
अपने अक्स समेत

सच्च
वह स्वर।
(4)
तब मेरे लिए पहाड      अरावली के
पुरातन-तम
खोद खोद डाले गये होगे
सदैव के एक भविष्य मे      अभी से
नग्नतम बिबाइयॉ      दरारे
धरती के सीने मे अन्दर तक चली गयी हुई
घूम घूम कर
एक स्थिर चक्कर मे
कविता की पक्तियो की तरह-
अभी से।

(5)
हॉ      मगर
वह
स्वऽ
र
एक फनल
धुँधुवाता
विशाल आकाश मे
और वही
मै
सीढ़ियो के-से
उलझे-पुलझे पथो से
चढ़ रहा हूँ उतर रहा हूँ चढ़ रहा
तर रहा
हूँ
और वही
एक
बड़ा नन्हा-सा
बड़ी गहराइयो वाला

अणु है अणु

नही मालूम ? अणु

गूँजता हुआ

एक व्यर्थ का अभ्युदय,

याकि

व्यर्थ का तुक --

क्षण का

निरन्तर --

एक बूँद लहू

और लो मेरा आविर्भाव

कि भवता

कि है-हो-था

अभी तक

वही मै कोई

एक कविता।

(6)

एक विलयनवादी काव्य जो कि केवल

मै लिखता------ लिख सकता------हमेशा नही----

वैसा काव्य। जैसा कि इनमे

ध्वनित-अध्वनित ·

स्व

-

-

-

-इत्यादि।

समय के

चौराहो के चकित केन्द्रो से

उद्‌भूत होता है कोई "उसे-व्यक्ति-कहो"

कि यही काव्य है।

आत्मतम।

इसीलिए उसमे अपने को खो दिया

जाना गवारा करता हूँ

क्योकि वहॉ मेरा एक महीन युग-भाव है
वही शायद मेरे लिए मात्र। शायद
मेरे ही अनेक बिंबो के लिए मात्र।
जिन्हे "मेरे पाठक कहा जाय" मात्र।

तो। इसमे और कुछ नही।
कोई सगीत नही। केवल प्रलाप।
केवल तम।
केवल प्रलाप। केवल मै और आप। अनाप शनाप।
शराब
यानी इन्सानियत की तलछट का छोडा हुआ
स्वाद।
मुझे दो।
मगर पैमाना हो
फोनिमिक्स
उन भाषाओ का, पश्चिम और पूर्व की, जो
मिलनसीमा को
आर्गनित
करती है,
बस
वही मेरा कवि
तुम्हारा अन्यतम व्यक्ति।

नश्शा मुझे नही होता। नही होता।
मुझे पीने वालो को
होता
है - मेरी कविता को
अगर वो उठा सके और एक घूँट
पी सके
अगर।

इसलिए बस
मुझे वही शराब दो। बस।
(-मुझे नश्शा नही चाहिए।)

# बात बोलेगी

बात बोलेगी,
हम नही।
भेद खोलेगी
बात ही।

सत्य का मुख
झूठ की ऑखे
क्या -- देखे ।

सत्य का रूख
समय का रूख है
अभय जनता को
सत्य ही सुख है,
सत्य ही सुख।
दैन्य दानव , काल
भीषण , क्रूर
स्थिति , कगाल
बुद्धि , घर मजूर।

सत्य का
क्या रग ? --
पूछो
एक सग।
–एक–जनता का
दु ख एक।
हवा मे उड़ती पताकाएँ
अनेक।

दैन्य दानव। क्रूर स्थिति।

कगाल बुद्धि   मजूर घर-भर।

एक जनता का - अमर वर

एकता का स्वर।

अन्यथा स्वातत्र्य-इति।

# ओ मेरे घर

ओ मेरे घर
ओ हे मेरी पृथ्वी
साँस के एवज तूने क्या दिया मुझे
—ओ मेरी माँ?

तूने युद्ध ही मुझे दिया
प्रेम ही मुझे दिया क्रूरतम कटुतम
और क्या दिया
मुझे भगवान दिये कई—कई
मुझसे भी निरीह मुझसे भी निरीह।
और अद्‌भुत शक्तिशाली मकानीकी प्रतिमाएँ।

ऐसी मुझे जिन्दगी दी
ओह
आँखे दी जो गीली मिट्टी का बुदबुद-सी है
और तारे दिये मुझे अनगिनती
साँसो की तरह
अनगिनती इकाइयो मे
मुझसे लगातार दूर जाते
मौत की व्यर्थ प्रतीक्षाओ—से।
और दी मुझे एक लम्बे नाटक की
हँसी
फैली हुई
दर्शकशाला के इस छोर से उस छोर तक
लहराती कटु—क्रूर।

फिर मुझे जागना दिया, यह कहकर कि
लो और सोओ।

और वही तलवारे अँधेरे की
    अन्तिम लोरियो के बजाय।

इन्सान के अॅखौटे मे डालकर मुझे
    सब कुछ तो दे दिया
जब मुझे मेरे कवि का बीज दिया कटु–तिक्त।

फिर एक ही जन्म मे और क्या–क्या
चाहिए।

5

उसने मुझसे पूछा, तुम्हारी कविताओ का क्या मतलब है?
मैने कहा-कुछ नही।
उसने पूछा-फिर तुम इन्हे क्यो लिखते हो?
मैने कहा-ये लिख जाती है। तब
इनकी रक्षा कैसे हो जाती है?
उसने क्यो यह प्रश्न किया?
मैने पूछा
मेरी रक्षा कहाँ होती है? मेरी सॉस तो-
तुम्हारी कविताएॅ है उसने कहा पर-
इन सॉसो की रक्षा कैसे होती आई?
वे सॉसो मे बॅध गये, शायद ऐसे ही रक्षा
होती आई। फिर बहुत से-गीत
खो गये।

6

वह अनायास मेरा पद गुनगुनाता हुआ बैठा
रहा, और मैने उसकी ओर
देखा, और मैं समझ गया।
और यह सग्रह उसी के हाथो मे खो गया।

7

उसने मुझसे पूछा, इन शब्दो का क्या
मतलब है? मैंने कहा - शब्द
कहाँ हैं? वह मौन मेरी ओर
देखता चुप रहा। फिर मैने
श्रम-पूर्वक बोलते हुए कहा-कि
शाम हो गयी है। उसने मेरी
आँखो मे देखा, और फिर-एकटक देखता
ही रहा। क्यो फिर उसने मेरा सग्रह
अपनी धुँधली गोद मे खोला और
मुझसे कुछ भी पूछना भूल गया।

मुझको भी नही मालूम, कौन था
वह। केवल यह मुझे याद है।

8

तब छदो के तार खिचे-खिंचे थे,
राग बॅधा-बॅधा था,
प्यास ऊॅगलियो मे विकल थी-
कि मेघ गरजे,
और मोर दूर और कई दिशाओ से
बोलने लगे-पीयूअ् । पीयूअ् । उनकी
हीरे-नीलम की गर्दने बिजलियो की तरह
हरियाली के आगे चमक रही थी।
कही छिपा हुआ बहता पानी
बोल रहा था अपने स्पष्ट मधुर
प्रवाहित बोल।

# वह सलोना जिस्म

शाम का बहता हुआ दरिया कहॉ ठहरा।
सॉवली पलके नशीली नीद मे जैसे झुके
चॉदनी से भरी भारी बदलियाँ है,
खाब मे गीत पेग लेते हैं
प्रेम की गुइयॉ झुलाती है उन्हे
-उस तरह का गीत, वैसी, नीद, वैसी शाम-सा है
वह सलोना जिस्म।

उसकी अधखुली ॲगडाइयॉ है
कमल के लिपटे हुए दल
कसे भीनी गध मे बेहोश भौरे को

वह सुबह की चोट है हर पखुडी पर।

रात की तारो-भरी शबनम
कहाँ डूबी है !

नर्म कलियो के
पर झटकते है हवा की ठड को।

तितलियॉ गोया चमन की फिजा मे नश्तर लगाती हैं।
-एक पल है यह समाँ
जागे हुए उस जिस्म का !
जहाँ शामे डूब कर फिर सुबह बनती हैं
एक-एक,-
और दरिया राग बनते हैं—कमल
फानूस-राते मोतियों की डाल-
दिन मे
साडियो के-से नमूने चमन मे उड़ते छबीले वहाँ

गुनगुनाता भी सजीला जिस्म वह–
जागता भी
मौन सोता भी, न जाने
एक दुनिया की
उमीद-सा,
किस तरह।

# लौट आ ओ धार

लौट आ ओ धार

टूट मत ओ साँझ के पत्थर
हृदय पर

(मै समय की एक लम्बी आह
मौन लम्बी आह)

लौट आ, ओ फूल की पखडी
फिर
फूल मे लग जा

चूमता है धूल का फूल
कोई, हाय।

# टूटी हुई, बिखरी हुई

टूटी हुई बिखरी हुई चाय
की दली हुई पॉव के नीचे
पत्तियॉ
मेरी कविता
बाल, झडे हुए, मैले से रूखे, गिरे हुए, गर्दन से फिर भी
चिपके
कुछ ऐसी मेरी खाल,
मुझसे अलग-सी, मिट्टी मे
मिली-सी

दोपहर बाद की धूप-छॉह मे खडी इन्तजार की ठेलेगाडियॉ
जैसे मेरी पसलियॉ
खाली बोरे सूजो से रफू किये जा रहे है जो
मेरी ऑखो का सूनापन है।

ठड भी एक मुसकराहट लिये हुए है
जो कि मेरी दोस्त है।

कबूतरो ने एक गजल गुनगुनायी
मैं समझ न सका, रदीफ-काफिये क्या थे,
इतना खफीफ, इतना हलका, इतना मीठा
उनका दर्द था।

आसमान में गगा की रेत आईने की तरह हिल रही है।
मै उसी मे कीचड़ की तरह सो रहा हूँ
और चमक रहा हूँ कहीं
न जाने कहाँ।

मेरी बाँसुरी है एक नाव की पतवार–
जिसके स्वर गीले हो गये हैं,

छप् छप् छप् मेरा हृदय कर रहा है
छप् छप् छप्।

वह पैदा हुआ है जो मेरी मृत्यु को सॅवारने वाला है।
वह दूकान मैने खोली है जहॉ 'प्वाइजन' का लेबुल लिए हुए
दवाइयॉ हॅसती है–
उनके इजेक्शन की चिकोटियो मे बडा प्रेम है।

वह मुझ पर हॅस रही है, जो मेरे होठो पर एक तलुए
के बल खडी है
मगर उसके बाल मेरी पीठ के नीचे दबे हुए है
और मेरी पीठ को समय के बारीक तारो की तरह
खुरच रहे है
उसके एक चुम्बन की स्पष्ट परछायी मुहर बनकर उसके
तलुओ के ठप्पे से मेरे मुॅह को कुचल चुकी है
उसका सीना मुझको पीसकर बराबर कर चुका है।

मुझको प्यास के पहाड़ो पर लिटा दो जहॉ मैं
एक झरने की तरह तड़प रहा हूँ।
मुझको सूरज की किरनो मे जलने दो
ताकि उसकी ऑच और लपट मे तुम
फौवारे की तरह नाचो।
मुझको जगली फूलो की तरह ओस से टपकने दो
ताकि उसकी दबी हुई खुशबू से अपने पलको की
उनींदी जलन को तुम भिगो सको, मुमकिन है तो।
हॉ, तुम मुझसे बोलो, जैसे मेरे दरवाजे की शर्माती चूले
सवाल करती हैं बार-बार. मेरे दिल के
अनगिनती कमरो से

हाँ, तुम मुझसे प्रेम करो जैसे मछलियॉ लहरों से करती हैं
. जिनमें वह फँसने नही आतीं,
जैसे हवाएँ मेरे सीने से करती हैं
जिसको वह गहराई तक दबा नहीं पातीं,

तुम मुझसे प्रेम करो जैसे मै तुमसे करता हूँ।

आईनो, रोशनाई मे घुल जाओ और आसमान मे
मुझे लिखो और मुझे पढ़ो।
आईनो, मुसकराओ और मुझे मार डालो।
आईनो, मैं तुम्हारी जिन्दगी हूँ।

एक फूल ऊषा की खिलखिलाहट पहनकर
रात का गड़ता हुआ काला कम्बल उतारता हुआ
मुझसे लिपट गया

उसमे कॉटे नही थे-सिर्फ एक बहुत
काली, बहुत लम्बी जुल्फ थी जो जमीन तक
साया किये हुए थी   जहाँ मेरे पॉव
खो गये थे।

वह गुल मोतियो को चबाता हुआ सितारो को
अपनी कनखियो मे घुलाता हुआ, मुझपर
एक जिन्दा इत्रपाश बनकर बरस पड़ा-
और तब मैंने देखा कि सिर्फ एक सॉस हूँ जो उसकी
बूँदो मे बस गयी है।
जो तुम्हारे सीनो मे फॉस की तरह खाब मे
अटकती होगी, बुरी तरह खटकती होगी।

मै उसके पाँवो पर कोई सिजदा न बन सका,
क्योकि मेरे झुकते न झुकते
उसके पॉवो की दिशा मेरी आँखो को लेकर
खो गयी थी।

जब तुम मुझे मिले, एक खुला फटा हुआ लिफ़ाफ़ा
तुम्हारे हाथ आया।
बहुत उसे उलटा-पलटा-उसमे कुछ न था-

तुमने उसे फेक दिया तभी जाकर मै नीचे
पड़ा हुआ तुम्हे 'मैं' लगा। तुम उसे
उठाने के लिए झुके भी, पर फिर कुछ सोचकर
मुझे वही छोड़ दिया। मै तुमसे
यो ही मिल लिया था।

मेरी याददाश्त को तुमने गुनाहगार बनाया-और उसका
सूद बहुत बढ़ाकर मुझसे वसूल किया। और तब
मैने कहा-अगले जनम मे। मै इस
तरह मुसकराया जैसे शाम के पानी मे
डूबते पहाड़ गमगीन मुसकराते है।

मेरी कविता की तुमने खूब दाद दी-मैने समझा
तुम अपनी ही बाते सुना रहे हो। तुमने मेरी
कविता की खूब दाद दी।

तुमने मुझे जिस रग मे लपेटा, मैं लिपटता गया
और जब लपेट न खुले-तुमने मुझे जला दिया।
मुझे, जलते हुए को भी तुम देखते रहे और वह
मुझे अच्छा लगता रहा।

एक खुशबू जो मेरी पलको मे इशारो की तरह
बस गयी है, जैसे तुम्हारे नाम की नन्ही-सी
स्पेलिग हो, छोटी-सी प्यारी-सी, तिरछी स्पेलिग।

आह, तुम्हारे दॉतो से जो दूब के तिनके की नोक
उस पिकनिक मे चिपकी रह गयी थी,
आज तक मेरी नीद मे गड़ती है।
अगर मुझे किसी से ईर्ष्या होती तो मै
दूसरा जन्म बार-बार हर घटे लेता जाता.
पर मैं तो जैसे इसी शरीर से अमर हूँ
तुम्हारी बरकत !

बहुत-से तीर बहुत सी नावे, बहुत से पर इधर
उड़ते हुए आये, घूमते हुए गुज़र गये
मुझको लिये, सबके सब। तुमने समझा
कि उनमे तुम थे। नही, नही, नही।
उनमे कोई न था। सिर्फ बीती हुई
अनहोनी और होनी की उदास
रगीनियॉ थी । फकत ।

# एक मुद्रा से

## (गीत)

-सुन्दर।
उठाओ
निज वक्ष
और-कस-उभर।

क्यारी
भरी गेदा की
स्वर्णारक्त
क्यारी भरी गेंदा की
तन पर
खिली सारी-
अति सुन्दर। उठाओ0।
स्वप्न-जड़ित-मुद्रामयि
शिथिल करूण।
हरो मोह-ताप, समुद
स्मर-उर वर ·
हरो मोह-ताप-
और और कस उभर।
सुन्दर। उठाओ0।
अकित कर विकल हृदय-पकज के अकुर पर
चरण-चिह्न,
अकित कर अतर आरक्त स्नेह से नव, कर पुष्ट, बढ़ूँ
सत्वर, चिरयौवन वर, सुन्दर!-

उठाओ निज वक्ष · और और कस, उभर !

# सूर्य के सिवा

(विन्ध्याचल के पार कभी क्या
झील-ताल के शीत कुहर से
मुँह निकालते सूरज को देखा है?
याद मुझे वह छिदरे घन का दृश्य
अभी तक।                    वह-)
मैले चूने सी पथरीली शाखे
या ताजे पत्ते कत्थे के से हरे
वह काली मछली सी पपडीली डाले,
वह कड़े-कटे पत्ते जो कीड़ो भरे,
पानी से धुल,
          मिट्टी से भर,
                    धूप से चमक
जानवरो के कपाल-पन्जर पड़े,
वह काले श्रापित पत्थर उबड़-खाबड़
जो कठिन कँटीले झखाड़ो मे खड़े,
वह मकड़ी के जालो की धुधली माया
तृण, पल्लव, शाखा, प्रस्तर, अस्थि लपेटे·
-उनमे जो कोमल तुहिन-कणो की झिल-मिल
सूर्य के सिवा उनका सुख कौन समेटे

टिप्पणी   यह कविता राजा दूबे और अशोक वाजपेयी द्वारा सपादित त्रैमासिक 'समवेत' के प्रवेशाक मे प्रकाशित हुई थी। इसे शमशेर जी ने फिर किसी सकलन मे शामिल नहीं किया।

## परिशिष्ट – III

जीवन वृत्त और साहित्य

# शमशेर बहादुर सिंह
# जीवन वृत्त और साहित्य

परिवार

नाम · शमशेर बहादुर सिह

जन्म नाम · कुलदीप सिह

पिता का नाम एवं व्यवसाय · बाबू तारीफ सिंह। वे क्रमश गोडा, देहरादून, सहारनपुर आदि स्थानो पर कलेक्ट्रेट मे अहलमद के पद पर रहे।

माता का नाम · श्रीमती प्रभुदेई

पत्नी का नाम · श्रीमती धर्मदेवी

## जीवनवृत्त

- 1911 मे 3 जनवरी को देहरादून मे जन्म।
- 1919 मे 8 वर्ष की आयु मे मॉ की मृत्यु।
- 1928 मे हाई स्कूल की शिक्षा गोण्डा से प्राप्त की। प्रारभिक एव माध्यमिक शिक्षा देहरादून मे।
- 1929 मे धर्मदेवी जी से विवाह
- 1931 मे गोडा से इटर की परीक्षा उत्तीर्ण की। इलाहाबाद आये
- 1933 मे इलाहाबाद डिग्री कॉलेज से बी ए किया।
- 1934 मे बी ए (आनर्स) मे अग्रेजी विषय के साथ दाखिला लिया, किन्तु पढ़ाई न कर सके।
- 1935 मे पत्नी श्रीमती धर्मदेवी की क्षयरोग से मृत्यु। इसी वर्ष शमशेर जी दिल्ली आ गए और दिल्ली के उकील बधुओ से लगभग एक वर्ष तक पेटिग सीखते रहे।
- 1936 मे दिल्ली छोड़कर वापस देहरादून। उकील बधुओ के कला विद्यालय की स्थानीय शाखा मे कला का प्रशिक्षण साथ ही अपने ससुर की केमिस्ट की दुकान पर कम्पाउडरी।
- 1937 मे श्री हरिवश राय बच्चन की प्रेरणा से पुन· इलाहाबाद वापसी। यही बच्चन एव सुमित्रानदन पत की प्रेरणा से एम ए (अग्रेजी) प्रीवियस मे दाखिला।
- 1938 मे एम. ए पूर्वार्द्ध परीक्षा उत्तीर्ण। किन्तु फाइनल न कर सके।
- 1939 मे पिता श्री तारीफ सिह की मृत्यु। धर्मदेवी की मृत्यु के पश्चात् चौथे ही वर्ष एक और आघात। 28 वर्ष की उम्र मे यह तीसरी मृत्यु थी। इसी वर्ष 'रूपाभ' मे कार्यालय सहायक।
- 1940 मे बनारस से प्रकाशित होने वाली 'कहानी' मासिक मे त्रिलोचन के साथ सम्पादन सहयोग।
- 1942 मे मामा बाबू लक्ष्मीचद के पास जबलपुर आगमन। यहाँ रहते हुए शमशेर जी कम्युनिस्ट पार्टी से जुड़े और पार्टी की गतिविधियो मे सक्रिय हिस्सेदारी निभाई। इसी वर्ष 25 मई को सरस्वती प्रेस बनारस से 'दोआब' का प्रकाशन।
- 1944 मे कैंसर ग्रस्त ससुर के इलाज के लिए बबई आगमन। बबई प्रवास के दौरान इप्टा से परिचय।
- 1945 मे दुबारा बबई पहुचे। पार्टी कम्यून में रहे। यहाँ पर श्री कैफी आजमी एवं श्री पूर्ण चंद जोशी के सपर्क मे आये। पार्टी कम्यून मे रहते हुए ही 'नया साहित्य' का संपादन किया।
- 1946 मे 'नया साहित्य' का निराला अक प्रकाशित।

- 1947 मे पुन इलाहाबाद वापस।
- 1948 मे 'माया' मे सहायक सपादक की नौकरी।
- 1952 मे दूसरा सप्तक का प्रकाशन। सात कवियो मे से एक।
- 1953 मे बहादुरगज मे जस्टफिट टेलर वाले मकान मे निवास। यहॉ शमशेर जी लबी अवधि तक रहे।
- 1954 मे माया प्रेस से त्यागपत्र दे दिया। माया के अलावा उन्होने कुछ समय तक 'नयापथ' एव 'मनोहर कहानियॉ' मे भी सम्पादन-सहयोग किया।
- 1959 मे 'कुछ कविताए' जगत शखधर द्वारा डी 53/96 कमच्छा वाराणसी से प्रकाशित।
- 1961 मे राजकमल प्रकाशन दिल्ली से 'कुछ और कविताए' का प्रकाशन।
- 1962 की गमियों मे कुछ दिनो के लिए सारनाथ मे निवास। यही पर एलेन गिन्सवर्ग से परिचय।
- 1963-64 मे प्रयाग और दिल्ली के बीच थोड़ा-थोड़ा समय बिताया।
- 1965 मे दिल्ली विश्वविद्यालय मे यू जी सी के प्रोजेक्ट 'उर्दू-हिन्दी कोश' योजना मे हिन्दी सपादक।
- 1975 मे राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली से 'चुका भी हूँ नही मै' के पहले सस्करण का प्रकाशन।
- 1977 मे 'चुका भी हूँ नही मैं' पर मध्य प्रदेश साहित्य परिषद का तुलसी पुरस्कार। इसी सग्रह पर साहित्य अकादमी दिल्ली का पुरस्कार। इसी वर्ष शमशेर जी यू जी सी के प्रोजेक्ट 'उर्दू-हिन्दी कोश' के हिन्दी सपादक पद से सेवानिवृत्त
- 1978 मे सोवियत सघ की यात्रा।
- 1980 मे 'उदिता-अभिव्यक्ति का सघर्ष' का वाणी प्रकाशन दिल्ली द्वारा प्रकाशन। प्रारभिक कविताओ का सकलन। 1980 मे इतने पास अपने' का भी प्रकाशन राजकमल प्रकाशन से।
- 1981 मे सभावना प्रकाशन हापुड़ द्वारा 'बात बोलेगी' का प्रकाशन। 'चुका भी हूँ नही मैं' का दूसरा सस्करण राधाकृष्ण प्रकाशन से।
- 1981 मे ही मध्य प्रदेश कला परिषद के अतर्गत स्थापित प्रेमचद सृजन-पीठ उज्जैन के अध्यक्ष नियुक्त।
- 1985 मे प्रेमचद सृजनपीठ के अध्यक्ष पद से हटे।
- 1985 मे ही सुरेन्द्र नगर (गुजरात) आगमन। अस्वस्थ। अहमदाबाद मे थोड़े समय तक इलाज। पुन डा रजना अरगड़े के साथ सुरेन्द्र नगर वापसी।
- 1987 मे मध्य प्रदेश सरकार द्वारा मैथिली शरण गुप्त पुरस्कार' से सम्मानित।
- 1988 मे 'काल तुझसे होड़ है मेरी' का प्रकाशन। इसी वर्ष 'कुछ गद्य रचनाए' का भी प्रकाशन।
- 1989 मे 'कुछ और गद्य रचनाए' प्रकाशित। कबीर सम्मान।
- 1992 में नवम्बर से जनवरी 1993 तक वल्लभ विद्यानगर गुजरात मे डा रजना अरगड़े के साथ निवास।
- 1993 मे फरवरी में पुन अहमदाबाद। लगातार अस्वस्थ।
- 12 मई 1993 को अहमदाबाद मे देहावसान।

# शमशेर की रचनाएं

**काव्य :**

1 कुछ कविताए चयनकर्ता और प्रकाशक, जगत शखधर, वाराणसी, डी 53/96 कमच्छा, वाराणसी, मई 1959

2 कुछ और कविताए राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1961

3 चुका भी हूँ नही मै राधा कृष्ण प्रकाशन दिल्ली 1975

4 इतने पास अपने राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1980

5 उदिता-अभिव्यक्ति का सघर्ष वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 1980

6 बात बोलेगी सभावना प्रकाशन, हापुड 1981

7 काल तुझसे होड़ है मेरी राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1990

8 कही बहुत दूर से सुन रहा हूँ राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली 1995

9 सुकून की तलाश (मरणोपरान्त) वाणी प्रकाशन दिल्ली 1998

**गद्य :**

1 कुछ गद्य रचनाएँ (दोआब, सरस्वती प्रेस, बनारस, 1942 और 'प्लाटका मोर्चा, न्यू लिटरेचर, इलाहाबाद, 1951, शामिल), सभावना प्रकाशन हापुड़, 1989।

2 कुछ और गद्य रचनाए राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 1992।

**चयन :**

1 दूसरा सप्तक भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, 1955

2 प्रतिनिधि कविताए सपादक डा नामवर सिह, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1990

3 टूटी हुई बिखरी हुई सपादक अशोक वाजपेयी, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली द्वारा 'वागर्थ' भारत भवन भोपाल के सहयोग से प्रकाशित 1990।

**अनुवाद :**

(उर्दू से)

1 कामिनी

2 हुश्शू

3. पी कहॉ तीनो सरशार के उर्दू उपन्यास प्रकाशक · सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद 1948

4. उर्दू साहित्य का सक्षिप्त इतिहास प्रो एजाज हुसैन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 1957

(अग्रेजी से)

5 षड़यत्र साएर और काहन, (सोवियत विरोधी गतिविधियो का इतिहास) पी. पी एच , 1946 (रूसी के अग्रेजी अनुवाद से)

6 पृथ्वी और आकाश : उपन्यास, लेखक वान्दा वासिलवास्का। सरस्वती प्रेस, बनारस, 1944.

7 आश्चर्य लोक मे एलिस, लुई कैरोल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1961

# संदर्भ सूची

(1) कविता के नए प्रतिमान, डा नामवर सिह, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

(2) नयी कविता और अस्तित्ववाद- डा रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

(3) भाषा, युगबोध और कविता, डॉ रामविलास शर्मा, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

(4) शमशेर बहादुर सिह, प्रभाकर श्रोत्रिय, साहित्य अकादमी दिल्ली

(5) हिन्दी साहित्य कोश, ज्ञानमण्डल, वाराणसी

(6) शमशेर बहादुर सिह, प्रकाशन विभाग, सूचना एव प्रसारण मत्रालय, दिल्ली

(7) चयन, निराला, राजकमल प्रकाशन दिल्ली

(8) कवियो का कवि शमशेर, रजना अरगड़े, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

(9) सकल्प का सौन्दर्यशास्त्र, मन्नू भडारी, अजित कुमार, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली

(10) वर्धमान और पतनशील, विजयदेव नारायण साही, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

(11) नयी कविता, डॉ देवराज, वाणी प्रकाशन दिल्ली

(12) साहित्य विधाओं की प्रकृति, देवी शंकर अवस्थी, मैकमिलन इडिया लिमिटेड, दिल्ली

(13) पत्र युवा कवि के नाम, राइनेर मारिया रिल्के, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

(14) शमशेर की कविता, नरेन्द्र वशिष्ठ, वाणी प्रकाशन, दिल्ली

(15) आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियॉ डा नामवर सिह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

(16) आधुनिक हिन्दी समीक्षा, निर्मला जैन, प्रेमशकर, साहित्य अकादमी, दिल्ली

(17) कला अनुभव, हिरियन्ना, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली

(18) Literary Theory, Jonathan Culler, OXFORD, New Delhı

(19) Ilusion and Realıty, C Caudwell, P P H New Delhı

(20) Dıoctıonary of Phılosophy, Progress Publıshers Moscow

(21) Form Baudelaıre to surrealısm, M Raymond, Peter owen Lımıted, London

(22) On Lıterature, Maxim Gorky, Progress Publıshers Moscow.

(23) The Modern Tradıtıon, By R Ellmann and Charles Feidelson, Jr;, OXFORD Press, New York

(24) The Prıncıples of Art, R. G. Collıngwood, OXFORD Press New York.

**पत्रिकाएं**

पूर्वग्रह, आलोचना, विपाशा, साक्षात्कार, कल के लिए, सापेक्ष, अर्न्तदृष्टि आजकल आदि।